धारा...58 ग्रंथांक...266

आत्मज्ञान-गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

आचार्य कनकनन्दी

पुण्य स्मरण

एक दिवसीय आदर्श पञ्च कल्याणक तथा क्षुल्लिका शान्तिश्री,
क्षुल्लिका श्रेयांसश्री की दीक्षा के स्मरणार्थ

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

श्रीमान राजकुमार जी जेजानी व ध.प. श्रीमती लता देवी जेजानी
एवं समस्त जेजानी परिवार, इतवारी, नागपुर (महाराष्ट्र)

ग्रन्थांक-266 प्रतियाँ-500
संस्करण-2016 (प्रथम) मूल्य-51/- रु.

सम्पर्क सूत्र व प्राप्ति स्थान

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त
(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418
(2) डॉ. नारायणलाल कछारा
सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

सीपुर ग्राम के वैश्विक अतिशयकारी देव-शास्त्र गुरु जिनालयस्थ श्रेयांसनाथ प्रभु की महिमा

भावसुमन अर्चक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : ज्योति कलश छलके....., नीले गगन के तले.....)

चरण कमल वन्देऽऽऽ श्रेयासं जिनवर केऽऽऽ
जिनके सन्मुख नतमस्तक हैंऽऽऽ जन-गण-मन सबकेऽऽऽ...(ध्रुव)...

त्रैलोक्य अधिपति जिनेशऽऽऽ शत इन्द्र करे है नमनऽऽऽ
शुभ मंगल ध्वनि सेऽऽऽ जय-जय के नाद सेऽऽऽ चरण...(1)...

अष्ट प्रतिहार्य की शोभाऽऽऽ चारु चन्द्र सम शीतल छायाऽऽऽ
श्यामल छबि झलकेऽऽऽ जन-गण-मन मोहेऽऽऽ चरण...(2)...

अद्भुत अद्वितीय छबि निरालीऽऽऽ श्याम वर्ण की प्रतिमा प्यारीऽऽऽ
पुलकित जन गण हैंऽऽऽ दर्शन सुखकर हैऽऽऽ चरण...(3)...

देव-शास्त्र-गुरु जिनालयऽऽऽ अतिशयकारी सीपुर ग्रामेऽऽऽ
कनकनन्दी गुरु हैंऽऽऽ वैज्ञानिक/(वैश्विक) गुरु हैंऽऽऽ चरण...(4)...

महामस्तक अभिषेक निरालाऽऽऽ पाप-ताप-संताप निवाराऽऽऽ
स्वप्न साकार हुएऽऽऽ 'सुविज्ञ' हर्षित हैऽऽऽ

श्रीसंघ हर्षित हैऽऽऽ जन-गण हर्षित हैंऽऽऽ
नितिन पुलकित हऽऽऽ धन्य-धन्य जन हैंऽऽऽ चरण...(5)...

सीपुर, दिनांक 19.10.2016, मध्याह्न 1.40

भगवान् श्रेयांसनाथ की स्तुति/आरती

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : भातुकली....., शत-शत वंदन....., कलयुग बैठा....., आत्मशक्ति.....)

श्रेयांस प्रभुवर के चरणों में, मिलती शांति अपार है।
चरण-शरण में जो भी आवे, होता वह भव पार है।। (ध्रुव)

मोक्षमार्ग के तुम हो नेता, कर्मअरि विजेता हो।

लोकालोक के तुम हो ज्ञाता, दिव्य देशना दाता हो।
समवशरण के अधिपति तुमऽऽऽ, निज स्वभाव में लीन हो।। (1)

तेरी अविकारी मुद्रा लख, भविजन अति हर्षाते हैं।
तव सम ही बनने के हेतु, तव गुण महिमा गाते हैं।
निज स्वरूप प्रकटाने हेतुऽऽऽ, करते हैं आराधना।। (2)

तेरे चिन्तन-स्मरण से ही, मिट जाता मन का संताप।
निश्छल भक्ति-पूजन से नश, जाता भव-भव का परिताप।
'सुवीक्ष' तव गुण प्राप्ति हेतुऽऽऽ, करती है नित अर्चना।। (3)

शत इन्द्रों से पूजित प्रभुवर, त्रिभुवन स्वामी हे जगदीश!
गणधर-ऋषि-मुनि सेवित भगवन्, कर दो मुझको कर्म प्रहीण।
लोकशिखर विराजित प्रभुवरऽऽऽ, मुक्ति वधु के कन्त हो।। (4)

सीपुर, दिनांक 17.10.2016

देव-शास्त्र-गुरु जिनालय सीपुर के श्रेयांसनाथ जी का महामस्तकाभिषेक

भावसुमन अर्चक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : रात कली इक....., करता हूँ वंदना.....(आधा है चन्द्रमा).....)

धन्य हमारे भाग्य/(भाव) जगे हैं...श्रेयांस प्रभु/(जिन) का न्हवन करे...
महामस्तक अभिषेक करके...रोग शोक संताप हरेऽऽऽ...धन्य...(ध्रुव)...

सीपुर ग्राम में आप विराजे...जन गण मन हर्षाये...
देश-विदेश से भक्त पधारे...अति सुखकर दर्शन पाए...
देवगण पशु मनुष्य आए...आनंद मंगल भाव जगे...धन्य...(1)...

अष्ट प्रातिहार्य मनहारी...श्यामल छबि अति प्यारी...
मोहनी मूरत साँवली सूरत...चारुचन्द्र सम शीतल लगे...
नभचरों का मधुर कलरव...प्रकृति भी झूमे व गाये...धन्य...(2)...

देवशास्त्र गुरु जिनालय...समवशरण सम लगे...

अद्भुत अद्वितीय अतिशयकारी...श्रेयांस प्रभुवर सौम्य लगे...
इनकी महिमा मंगलकारी...जन-जन का कल्याण करे...धन्य...(3)...

वात्सल्य रत्नाकर विमलसागर...छबि मनोरम लागे...
कनकनन्दी गुरु विज्ञानी...छोटे श्रेयांस प्रभु हैं.../(वैश्विक संत विराजे)...
माँ सरस्वती आगे चले है...लक्ष्मी देवी भी पीछे आए...धन्य...(4)...

सूरी वैराग्यनंदी पधारे...चतुर्विध संघ संग लाए...
दादा-पोता गुरु-शिष्य मिलना (है)...जन-गण का मन मोहे...
'सुविज्ञ' जनों का भाग्य जगा है...मंगलकारी अवसर है...धन्य...(5)...

अतिशय क्षेत्र सीपुर में देखो...जनसमूह है भारी...
मानभद्र जी रक्षा करे है...नितिन की भक्ति न्यारी...
नयनाभिराम अभिषेक है...जन-गण का अभिनंदन है...धन्य...(6)...

सीपुर, दिनांक 20.10.2016, रात्रि 10.35

आचार्य कनकनन्दी जी से मुझे प्राप्त हुआ रत्नत्रय

-क्षु. सुवीक्षमती

मन की चाहत मुझे ना कभी चाहिए, मन परे जो भी है वो मुझे चाहिए।
मन तो करता है अपनी मनमानी, मन की प्रवृत्ति तो है अधोगामी।। (1)

मैं सतत ही करूँ आत्म-संबोधन, आत्म-चिंतन-चर्चा व संशोधन।
लागी है अब लगन आत्मा में मेरी, मुझको तो बनना है आत्म-विज्ञानी।। (2)

ख्याति की ना मुझे है कभी कामना, आत्म-वैभव मिले है यही भावना।
मुख से शब्द झरे सत्य अमृत लिए, साधना हो मेरी सादगी को लिए।। (3)

मोह माया त्यजूँ ऐसा वर दो गुरु, राग-द्वेष नशे सत्य-साम्य वरूँ।
स्वाभिमान-सोऽहं व अहं को धरूँ, हे गुरु! 'कनक' मैं तुम्हें नित नमूँ।। (4)

पाये जो दर्श तव मिट गया मोहतम, मिल गई है मुझे सद्गुरु की शरण।
मिट गये भ्रम घने मिथ्या-बोध नशा, आचरण भी मेरा हो गया है खरा।। (5)

सीपुर, दिनांक 15.10.2016

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव के गुण गण-स्मरण

-बा.ब्र. पल्लवी

(चाल : जिस देश में गाँधी....., श्री रामचन्द्र कृपालु....., हर देश में तू.....)

वैज्ञानिक संत तुम्हें नमः, आध्यात्मिक संत तुम्हें नमः।
सतत नमः सतत नमः, वैश्विक गुरु सतत/(नित्य) नमः।।

हे! ज्ञान के सागर तुम हो, ध्यान का आगर तुम हो।
स्वाध्याय तपस्वी तुम्हें नमन हो, आचार्य रत्न तुम्हें नमः।। सतत...(1)

हे! सत्य प्रिय/(ज्ञाता) संत नमः, मौन प्रेमी संत नमः।
वात्सल्य मूर्ति संत नमः, समताधारी मुनिवर नमः।। सतत...(2)

हे! बहुभाषा विद् संत नमः, प्रशंसा-प्रिय संत नमः।
हे! कोमल हृदयधारी संत को, त्रय योग से मैं नमन करूँ।। सतत...(3)

हे! अनुशासन प्रिय संत नमः, कर्त्तव्यनिष्ट श्रमण नमः।
समयप्रज्ञाधारी गुरु को मैं वदूँ, शुभ भाव सहित।। सतत...(4)

हे! उच्च विचारधारी नमः, सृजनशील तुम्हें नमः।
हे! प्रयोगशील संत नमः, प्रकृति प्रेमी यति नमः।। सतत...(5)

हे! चिंतनशील संत नमः, हे! आत्म प्रिय संत नमः।
हे! शांति प्रिय संत को मैं बारम्बार नमन करूँ।। सतत...(6)

हे! प्रामाणिकता के धनी नमः, सत विश्वास प्रेमी संत नमः।
हे! सदाचारी आचार्य नमः, स्वाध्याय प्रेमी ज्ञानी नमः।। सतत...(7)

हे! अनुभव वृद्ध तुम्हें नमः, सहिष्णुताधारी संत नमः।
हे! सत साहसी श्रमण नमः, परिशोधन शील सूरी नमः।। सतत...(8)

हे! शालीन शांत संत नमः, परोपकारी महंत नमः।
हे! उदार मनोभावी मुनि नमः, व्यापकताधारी श्रमण नमः।। सतत...(9)

हे! विज्ञान अध्येता संत नमः, हे! गणित-प्रयोक्ता श्रमण नमः।
व्याकरण-प्रयोक्ता-ज्ञानी नमः, उच्चारण-शुद्धिकरण नमः।। सतत...(10)

हे! एकता-प्रयोगी तुम्हें नमः, लेखन-शील संत नमः।

हे! विनम्रशील सूरी नमः, सरल स्वभावी संत नमः।। सतत...(11)

हे! अहिंसा-प्रयोगी संत नमः, न्याय-प्रिय आचार्य नमः।

हे! अध्ययनशील संत नमः, नैतिकता प्रेमी तुम्हें नमः।। सतत...(12)

हे! गुणग्राही संत श्रेष्ठ नमः, संस्कृति-प्रिय सूरी नमः।

हे! आयुर्वेद-ज्ञाता तुम्हें नमः, संगीत प्रेमी संत नमः।। सतत...(13)

हे! शिक्षा-शील-विज्ञाता नमः, संगठन कर्त्ता संत नमः।

हे! आडम्बर त्यागी श्रमण नमः, निस्पृह योगी तुम्हें नमः।। सतत...(14)

हे! विश्व बंधु तुम्हें नमः, मैं (स्व-आत्मा) के ज्ञानी-ध्यानी नमः।

(मुझमें) मैं का ज्ञान पल्लवीत करो, ये विनती मेरी पूर्ण करो।। सतत...(15)

सीपुर, दिनांक 14.10.2016, मध्याह्न 12.00 व रात्रि 8.00

ध्यान मेरा नाम है (ध्यान की आत्मकथा)

(ध्यान से बढ़ते है ज्ञान-समता-शांति-शक्ति)

(चाल : छोटी मेरा नाम रे....., जिया बेकरार है.....)

ध्यान मेरा नाम है, ज्ञान बढ़ाना काम है।

समता-शांति-शक्ति बढ़ाना, मेरा ही उत्तम काम है।। (स्थायी)

एकाग्रचित्त मेरा स्वरूप, इन्द्रियाँ व मन निरोध।

राग-द्वेष-मोह-काम (क्रोध) त्याग से, होता जाता हूँ समृद्ध।।

इन्द्रियों की चंचल वृत्ति जब, होती जाती है निवृत्त।

मन की भी चंचल वृत्तियाँ, होती जाती है निवृत्त।। (1)

यथा जलाशय में पत्थर डालने से, क्षुभित होती है जलराशि।

उससे उत्पन्न होती तरंगें, फैलकर क्षुभित करती जलराशि।।

उस जल में प्रतिबिंब स्पष्ट, नहीं हो पाता है प्रगट।

चंचल चित्त में तथाहि ज्ञान, नहीं हो पाता है प्रगट।। (2)

चंचल जल में यथा प्रतिबिंब, होता रहता है विकृत।

चंचल चित्त में (तथा) ज्ञान आदि, होते रहते हैं विकृत।।

यथा स्थिर जलराशि में, प्रतिबिंब होते स्पष्ट प्रगट।
तथाहि स्थिर-निर्मल चित्त में, ज्ञान आदि होते प्रगट।। (3)

ज्ञान आदि है आत्म-स्वभाव, सुप्त-गुप्त राग-द्वेषादि से।
राग-द्वेषादि के (यथा) योग्य अभाव से, प्रगट होते ज्ञानादि उस अंश में।।

शुक्ल ध्यान से होता केवलज्ञान, अनंतदर्शन सुख वीर्य।
उससे निम्न स्तर ध्यान से, (तद्नुकूल) प्रगट होते ज्ञानादि गुण।। (4)

दीक्षा लेते ही तीर्थंकर मुनि के, प्राप्त होते मनःपर्यय ज्ञान।
चउसठ ऋद्धियाँ प्रगट होती, ऐसी है मेरी शक्ति प्रबल।।

इससे विपरीत मेरा विकृत रूप, आर्त्तरौद्र ध्यान स्वरूप होता।
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोधादि युक्त, आर्त्तरौद्र ध्यान रूप होता।। (5)

इसी से चित्त होता चंचल, जिससे पाप बंध होता प्रबल।
जिससे ज्ञान-समता-शांति, होते जाते हैं क्षीण से क्षीणतर।।

धर्म ध्यान से होता (है) चित्त शुभ, राग-द्वेषादि होते मंद।
दान-दया-सेवा-परोपकार सह, श्रावक-श्रमण के व्रत सहित।। (6)

धर्म ध्यान से होते आर्त्तरौद्र नाश, शुक्ल ध्यान क्रमशः होता विकास।
यह मेरा संक्षिप्त स्वरूप, 'कनकनन्दी' ने बनाया काव्य।। (7)

ध्यान मेरा नाम है, ज्ञान बढ़ाना काम है।
समता-शांति-शक्ति बढ़ाना, मेरा ही उत्तम काम है।।

आचार्य कनकनन्दी गुरुवरांशी निवेदन (प्रार्थना)

रचयिता-ब्र. संगीता
सहायक-श्रमणी आर्यिका सुवत्सलमती

(चाल : आदिनाथ जी.....)

कनकनन्दी जी नाव चांगले दृष्टि देखीता/(प्रथम दर्शनी) मन रमले।
रामगढ़ मध्ये तव वाणी ऐकूणी, आनंदाने आले मन भरूनी।।

सहज-सरल सुहृदयी आचार्य गुरु आहे ते कसे?।

माझ्या मनात आज ही असे, प्रतिबिंबला तो क्षण असे।।

अनेकदा भी संघात आले, सोडून जाण्यास मन न माने।
एकच भावना, माझ्या मनात, भाग्य लाभले तर राहील संघात।।

दीक्षा घेण्याचे भाग्य लाभले (तर) कनकनन्दी जी च गुरुँ माझे।
पुत्र-पुत्री व ब्रह्मचारीच्या अनुमोदने ने सौख्य लाभले।।

अल्प बुद्धि मी याचना करी, तव-चरणी राहील बरी।
शुभ भावना माझी ही अशी, दीक्षा, शिक्षा-समाधी तुम्हीच द्यावी।।

दीर्घायु होवो माझे गुरुजी, ईश चरणी प्रार्थना करी।
त्वरेने मला दीक्षा देऊनी, मम जन्म हा सफल तू करी।।

कनकनन्दी जी माझे गुरुवर, स्वाभिमान हा वाटतो मनी।
चरण शरण भी तुझ मागते, आर्यापद हे मागते झणी।।

काय भाग्य हे संगीताचे, 'कनक' गुरुंची शिष्या मी असे।
माया आईची वडिलांची दया, वर्णन करावया शब्द अपूरे।।

निस्पृह संत गुरुवर की प्रभावना

-बा.ब्र. पल्लवी

(चाल : नम्र मनेयलि दिनवु-दिनवु.....कन्नड़ राग.....)

वैज्ञानिक आचार्य गुरु के शरणों में सब आ जाओ।
मैं (स्व, आत्मा) को पाके, जीवन सफल (धन्य) बना लो।
स्वाध्याय तपस्वी गुरुवर के शरण में आ जाओ, शरण में आ जाओ।। (ध्रुव)

गुरुवर महा मेधावी है, प्राणी मात्र में समता है।
जो भी आते शरणों में तर जाते संसार से।
सत्य, शांति, निस्पृह गुरु की सब मिलके जय बोलो।2
गुरुवर के शरण पाके, भव सिंधु से तर जाओ।। वैज्ञानिक...(1)

सरल जीवन गुरु का है, उच्च विचार महान् है।
जंगल में रहकर भी, देश-विदेशों में प्रचार (प्रसार) है।
ख्याति-पूजा-लाभ त्यागी का जीवन ही धन्य है।2

ऐसे गुरु की सुआश्रय लेके, शिष्य भी परिवर्तित है।। वैज्ञानिक...(2)

परोपकारी गुरुवर का, जीवन ही श्रेष्ठ है।
अनेक साधु-साध्वी-व्रती की ज्ञान-दान ही जेष्ट है।
बहु शिबिर, प्रवचनों से बहु भक्तों भी प्रभावित है।2
आचार्य रत्न की शरण पाके, पल्लवी भी प्रभावित है।। वैज्ञानिक...(3)

स्वयं को पाने के मेरे भाव

-आ.भ. कनकनन्दी जी के चरणों में
-शिष्य अनुराग

(चाल : दमादम मस्त कलंदर.....(सिंधी चाल))

मैं (स्व) को पाने की मेरी है ये भावना,
कनकनन्दी जी की, शरण में (ये, शिष्य) आया,
मन में जागे भाव, स्वयं को पहचानने के, गुरुवर जीऽऽऽ,
ऋषिवर जीऽऽऽ स्वयं से हमें मिला दो, बेड़ा पार लगा दो।। (स्थायी)

1. कनकनन्दी जी के द्वारे आए, निज आतम को ध्याने आए,
   मैं को पाने हम आए हैं बड़ी दूर से, गुरुवर जी, ऋषिवर जीऽऽ,
   स्वयं से हमें मिला दो...(2) ।। (1)

2. हैदराबाद-भोपाल से अनुराग आया, लंदन-U.K. से योगेन्द्र आया,
   भाभी श्वेता साथ में आई, पुत्री आरोही संग में लाई,
   वैभवी हीरा अति हर्षाया, आगे भी आने का मन दर्शाया,
   भाव जागे मन में गुरु वात्सल्य अनुभव करने के,
   ऋषिवर जी, गुरुवर जी, स्वयं से हमें मिला दो...(2) ।। (2)

3. कब से थी ये मन में आशा, गुरुवर जी का वात्सल्य पाऊँ,
   वैयावृत्ति का सौभाग्य पाऊँ, गुरु छाया में/(भक्ति से) आए ऐसे विचार,
   मुनिवर की प्रेरणा से, भावांजली मैंने प्रस्तुत कर दी,
   स्वयं से हमें मिला दो...(2) ।। (3)

4. स्वाध्याय करके अति हर्षाया, भाषा-विज्ञान समझ में आया,
   अब जाकर के, मुझको समझ ये आया, मैं तो हूऽऽऽ बस Beginner

मुझको तो कुछ नहीं आता, स्वयं से हमें...(2) ।। (4)

5. मन में रहे ये भावना ऐसी, गुरुवर श्री का सान्निध्य पाऊँ,
सान्निध्य पाके पाऊँ, आत्म से 'अनुराग', गुरुवर श्री आशीष दे,
अपने समीप मुझको रखें, स्वयं से हमें मिला दो...(2) ।। (5)

सीपुर, दिनांक 13.10.2016, 07.45 रात्रि

सीपुर ग्राम में द्वय सूरी संघ मिलन निमित्त स्वागत गीत

-आ. सुवत्सलमती

(चाल : मेरा जूता है जापानी.....)

सीपुर ग्राम में श्रीजी आए...उनका उत्सव मनाए...
अपनी भावना जगा लो...कनकनन्दी गुरु पाए...(स्थायी)...

पद्मनंदी गुरुदेव के शिष्य...वैराग्यनंदी जी आए...2
दादा गुरु के दर्शन हेतु...श्रीसंघ साथ में लाए...2
प्रायः बीस वर्षा बाद...दादा-पोता मिल रहे है...अपनी...(1)...

चार मिले व चौसठ खिले...बीस हैं द्वय कर जोड़े...2
सात करोड़ रोमांचित होवे...सर्वांग पुलकित होवे...2
सब जन-मन हर्षाए...जय-जय ध्वनि बरसाए...अपनी...(2)...

मनोज्ञ प्रतिमा श्रेयांस जिनकी...परिकर है सम्पन्न...2
दक्षिण भाग में सरस्वती जी...वाम में गुरु विमल...2
देव-शास्त्र गुरु त्रय...जिनालय मंगलकर...अपनी...(3)...

कनकनन्दी गुरु श्रीसंघ के...आशीष नितिन पे विशेष...2
अतिशय क्षेत्र सीपुर में...उपलब्धि हो रही विशेष...2
नितिन जुग-जु जिये...हीरक इतिहास रचाए...अपनी...(4)...

सीपुर, दिनांक 21.10.2016, मध्याह्न 2.40

समता तीर्थधाम अतिशय क्षेत्र सीपुर के देव-शास्त्र-गुरु जिनालय की आरती

शब्द सुमनअर्चक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : जय जगदीश हरे....., जय महावीर प्रभो.....)

ॐ जय श्रेयांस प्रभुऽऽऽ त्रिलोक के आप विभुऽऽऽ
सीपुर ग्राम विराजेऽऽऽ अतिशयकारी प्रभुऽऽऽ ॐ जय...(ध्रुव)...

देवशास्त्र गुरु जिनालय मेंऽऽऽ अतिशय दर्शायोऽऽऽ स्वामी अति आनंद छायो...
आप विराजित मध्येऽऽऽ पार्श्व में विमल गुरुऽऽऽ ॐ जय...(1)...

दक्षिण भागे सरस्वती माँऽऽऽ ज्ञानानंद दायीऽऽऽ माता अति मंगलकारी...
सप्तभंगमयी वीणाऽऽऽ सुनावे जिनवाणीऽऽऽ ॐ जय...(2)...

अभिषेक अर्चन अतिशयकारीऽऽऽ स्वास्थ्य सुखदायीऽऽऽ प्रभु अतिशय हितकारी...
देश-विदेश के भक्त/(यात्री)ऽऽऽ पावे सुख शांतिऽऽऽ ॐ जय...(3)...

यह क्षेत्र है कृषि मध्ये गृहऽऽऽ श्रमण आनंद धामऽऽऽ प्रभु शांति निकेतन...
गुरुकुल-विश्वविद्यालयऽऽऽ समता तीर्थ धामऽऽऽ ॐ जय...(4)...

कुलाधिपति कनकनन्दीऽऽऽ वैज्ञानिक गुरुऽऽऽ दादा निस्पृह शांत गुरु...
ज्ञान-ध्यान तपोरक्तऽऽऽ स्वाध्याय तपस्वी गुरुऽऽऽ ॐ जय...(5)...

मानभद्र भक्त परिवारऽऽऽ नितिन विकास करेऽऽऽ प्रभु सुख शांति को वरे...
'सुविज्ञ' भाग्यशालीऽऽऽ जन-गण मोद भरेऽऽऽ ॐ जय...(6)...

सीपुर, दिनांक 25.10.2016, रात्रि 10.42

'कनक' गुरु से 'मैं' का ज्ञान पाकर मैं धन्य हूँ

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : जय हनुमान....., सायोनारा....., अच्छा सिला....., आत्मशक्ति....., शायद मेरी....., शत-शत वंदन....., आधा है चन्द्रमा....., जिन्दगी एक सफर.....)

मैं हूँ अनुपम अद्वितीय, सच्चिदानंदमय अव्याबाध।
अक्षय अनंत शुद्ध शाश्वत, मैं हूँ आत्मा अजर-अमर।। (1)

सत्य-शिव-सुंदर हूँ अविनाशी, अविचल निर्मल हूँ निर्विकारी।
निस्पृह निरामय शुद्धात्मा, स्वयंभू सनातन स्वयंपूर्ण।। (2)

अचल विदेही हूँ सर्वज्ञ, कर्म लेप रिक्त हूँ निष्कर्मा।
अमूर्तिक हूँ अक्ष अगम्य, जीव द्रव्य हूँ जीव तत्त्व।। (3)

जीव तत्त्व हूँ परम तीर्थ, मार्गणा गुणस्थान लेश्या रिक्त।
वीतरागी विमल परमात्मा, सत्य-साम्यमय आनंद धाम।। (4)

जन्म-जरा-मृत्यु नहीं मम रूप, मैं हूँ चिन्मयानंद चिद्रूप।
राग-द्वेष-मोह कषाय रिक्त, मैं हूँ अनंत गुण संयुक्त।। (5)

आत्म-हितैषी हे कनक गुरुवर, तव चरणों में प्रणमूँ सूरिश्वर।
मुझको 'मैं' का बोध कराया, आत्मा-अनात्मा में भेद बताया।। (6)

हे गुरुवर सन्मार्ग-दिवाकर, समता आदि गुण-रत्नाकर।
तव निश्रा में रहूँ आजीवन, यह वर मुझको दे दो ऋषिवर।। (7)

सीपुर, दिनांक 27.10.2016

सत्य साम्य सुखामृत

अखिल भारतीय जैन एकता मञ्च संस्थान

(प्रशस्ति/अनुमोदना)

समता तीर्थधाम, अतिशय क्षेत्र सीपुर के उद्धारक सकारात्मक सृजनात्मक व्यक्तित्व व कृतित्व के धनी महान् लक्ष्यधारी देव-शास्त्र-गुरु व धर्म के अनन्य उपासक, जैन से लेकर जन संगठक मधुर विनम्र समर्पित सरलमना ''श्री नितिन जैन'' के प्रति अखिल भारतीय जैन एकता मञ्च संस्थान अपनी महती सद्भावना सह आपके प्रगतिशील-आध्यात्मिक जीवन की मंगल कामना करते हुए आपको ''कर्मठ समाज रत्न'' सम्मान से विभूषित करते हैं।

आपकी महान् भावना व कार्य योजना सफल बने, एतदर्थ वैज्ञानिक श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव श्रीसंघ का शुभ मंगल आशीर्वाद!

शुभाकांक्षी/अनुमोदक
(अखिल भारतीय जैन एकता मंच)

आचार्य भगवन् श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव सान्निध्य से सीपुर अतिशय क्षेत्र में भव्य दीक्षा एवं दीपोत्सव

भाव संयोजक-ब्र. अजय संघस्थ श्री गुरुदेव श्रीसंघ

(चाल : दीपावली मनाई सुहानी.....)

दीक्षा घड़ी...दीक्षा घड़ी...दीक्षा घड़ी...
दीक्षा घड़ी आई सुहानी...दीक्षा घड़ी...आई सुहानी...
मेरे गुरुवर की बातों में जादू का पानी...दीक्षा घड़ी...
दीपावली मनाई सुहानी...दीपावली...मनाई सुहानी...
मेरे गुरुवर की बातों में जादू का पानी...
दीपावली...मनाई सुहानी...दीपावली...(ध्रुव)

श्रद्धा की दीपक, भक्ति की ज्योति...2
सत्य वात्सल्य की जलती निशानी...2
दीक्षा घड़ी आई सुहानी, दीपावली मनाई सुहानी...
मेरे गुरुवर की बातों में जादू का पानी...
दीक्षा घड़ी...दीपावली...
मेरे गुरुवर की अमृत वाणी...2
दुनिया भई रे गुरु की दीवानी...2
होऽऽऽ मेरे गुरु-सा नहीं कोई ज्ञानी...
मेरे गुरु का नहीं कोई सानी...
दीक्षा घड़ी आई सुहानी...दीपावली मनाई सुहानी...
मेरे गुरुवर की बातों में जादू का पानी...(1)...

'अजब बा' के भाग्य सँवारे...2
'भूरी बा' के भी भाव दुलारे...2
होऽऽऽ सारे जहाँ के भाग्य सुधारे...
'अजय' के भी भाग्य जगा दे...
दीक्षा घड़ी आई सुहानी...दीपावली मनाई सुहानी...
मेरे गुरुवर की बातों में जादू का पानी...(2)...
दीक्षा घड़ी...दीक्षा घड़ी...दीपावली...दीपावली...

सीपुर, दिनांक 24.10.2016, प्रातः 6.00 बजे

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र	विषय	पृ.सं.
1.	वैश्विक अतिशयकारी देवशास्त्र गुरु जिनालयस्थ श्रेयांस प्रभु की महिमा	2
2.	भगवान् श्रेयांसनाथ की स्तुति/आरती	2
3.	देव-शास्त्र-गुरु जिनालय सीपुर के श्रेयांसनाथ जी का महमस्तकाभिषेक	3
4.	आचार्य कनकनन्दी जी से मुझे प्राप्त हुआ रत्नत्रय	4
5.	आचार्य कनकनन्दी जी गुरुदेव के गुण-गण-स्मरण	5
6.	ध्यान मेरा नाम है (ध्यान की आत्मकथा)	6
7.	आचार्य कनकनन्दी गुरुवरांशी निवेदन (प्रार्थना)	7
8.	निस्पृह संत गुरुवर की प्रभावना	8
9.	स्वयं को पाने के मेरे भाव	9
10.	सीपुर ग्राम में द्वय सूरी-संघ मिलन निमित्त स्वागत गीत	10
11.	समता तीर्थधाम अतिशय क्षेत्र सीपुर के देव-शास्त्र-गुरु-जिनालय की आरती	11
12.	'कनक' गुरु से 'मैं' का ज्ञान पाकर मैं धन्य हूँ	11
13.	अखिल भारतीय जैन एकता मञ्च संस्थान प्रशस्ति-अनुमोदना	12
14.	आचार्य भगवन् श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव सान्निध्य से सीपुर अतिशय क्षेत्र में ''भव्य दीक्षा एवं दीपोत्सव''	13

आत्मज्ञान गीताञ्जली

1.	स्व-शुद्धात्मा स्वरूप वंदन-अभिनंदन	16
2.	समग्र क्रांति के हेतु	16
3.	शांत व अशांत मन से लाभ व अलाभ	17
4.	विकल्प-संकल्प-संक्लेश नाश हेतु मेरी साधना	18
5.	आकर्षण-विकर्षण त्याग से पाऊँ समता-शांति	19
6.	स्व-आत्मज्ञान से पूर्व-वर्तमान-भविष्य	20
7.	कतिपय आगम के सूत्र-मेरे प्रायोगिक अनुभव में	25

8.	आत्मगुण स्मरण-कथन आदि से मुझे लाभ	26
9.	उत्तरोत्तर निर्विकल्प-ज्ञानानंद हेतु मेरी साधना	27
10.	धर्म सुखकारी बने तो कैसे?	28
11.	हे! मानव नैतिक से धार्मिक व आध्यात्मिक बनो	33
12.	'अहंकार' से परे 'स्वाभिमान' 'सोऽहं'-'अहं' भाव	36
13.	नजरिये का त्याग	37
14.	आध्यात्मिक में अनंत व्यापकता रचनात्मकता-शाश्वतिकता-शांति	38
15.	अनंत तृप्ति मिले तो कैसे!?	46
16.	पश्चात्ताप-प्रायश्चित्त से कर्मनाश करूँ	52
17.	मानव को सहानुभूति नहीं समानुभूति की आवश्यकता	55
18.	प्रेम से बढ़ती है मित्रता-एकता-सम्वृद्धि	57
19.	भौतिक से आध्यात्मिकता की ओर वैज्ञानिक शोध	59
20.	धर्म का सत्य स्वरूप व विकृत रूप तथा दोनों के फल	60
21.	''मैं'' की आत्मकथा-आत्मव्यथा-शुद्धावस्था	61
22.	'माँ' की आत्मकथा व आत्मव्यथा	63
23.	साधु मेरा नाम है	66
24.	हँसी मेरा नाम है	66
25.	भाषा मेरा नाम है (भाषा की आत्मकथा)	67
26.	पशु मेरा नाम है	68
27.	अंधा मेरा नाम है (विभिन्न प्रकार के अंधे)	70
28.	मूर्ख की आत्मकथा व आत्मव्यवस्था (कुशिष्य-सुशिष्य)	70
29.	श्वान (कुत्ता) की आत्मकथा व आत्मव्यथा	77
30.	दीपावली की आत्मकथा-आत्मव्यथा	79
31.	आ. कनकनन्दी गुरुदेव से निवेदन	86
32.	आ. कनकनन्दी गुरुदेव से क्षमायाचना	87
33.	धर्म पर आने वाले संकटों को दूर करने हेतु...	89
34.	अनंत आत्म वैभव बिना गर्व आदि क्यो करूँ ?	91

स्व-शुद्धात्मा स्वरूप वंदन-अभिनंदन

(चाल : ॐकार स्वरूपा.....(मराठी).....)

सत्य-सनातन हे! आत्म रूप...स्वयंभू-स्वयंपूर्ण शुद्धात्म रूप...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

शुद्ध-बुद्ध-सिद्ध आनंद घन...अनंत गुण गण युक्त चैतन्य रूप...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्यमय...आत्म श्रद्धान ज्ञान चारित्र संपूर्ण...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

अमूर्त-अविकारी-अमृत स्वरूप...तन-मन-इन्द्रिय-कर्म रहित...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-स्वरूप...जन्म-जरा-मरण रहित...शिव स्वरूप...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

आत्म स्थितोऽपि...स्वर्गतोऽपि...'कनकनन्दी' के शुद्ध स्वरूप...2
तुझे नमूँ...तुम्हें नमूँ...

सीपुर, दिनांक 13.102016, रात्रि 10.08

समग्र क्रांति के हेतु

(बुद्धि से परे भी है क्रांति के अनेक उपाय)

(चाल : चलो दिलदार चलो.....)

चलो क्रांतिकामी (कारी) चलो...क्रंति से शांति पालो (पा-लो)!
भौतिक-बुद्धि परे...नैतिक-आत्मिक बनो...(ध्रुव)

भौतिक होता जड़, चेतना-शांति शून्य,
इसी से न मिलेंगे, सुख-शांति संपूर्ण।

जीवन जीने हेतु...भौतिक वस्तु चाहिए,
भोजन-पानी आदि...उपकरण भी चाहिए।। (1)

इसी से परे भी तो...बुद्धिलब्धि (I.Q.) चाहिए,
सीखना (व) सिखाने हेतु...बौद्धिकता चाहिए।

इसी से ही संपूर्ण...कार्य न होते पूर्ण,
कंप्यूटर आदि से यथा..महान् कार्य न सम्पन्न।। (2)

इसी से परे भी...संवेदना (E.Q.) चाहिए,
दयादान सेवा...परोपकार चाहिए।

सनम्र सत्यग्राही...उदार भाव युक्त,
सरल-सहज-सौम्य...हित व प्रियवच।। (3)

संवेदना से युक्त...कम्युनिकेशन कोशंट (C.Q.),
ज्ञानार्जन (व) शिक्षा हेतु...परस्परउपग्रहो युक्त।

धैर्य (P.Q.) व सहिष्णुता युक्त...करेज कोशंट (C.Q.) युक्त,
सांस्कृतिक आध्यात्मिक...उपलब्धियाँ (S.Q.) युक्त।। (4)

उक्त गुणों से सहित...ध्यान-अध्ययन युक्त,
क्षमादि दश धर्म सहित...प्रमोद माध्यस्थ युक्त।

आत्मविशुद्धि सहित...होती है सही क्रांति,
आत्म उपलब्धि हेतु...'कनकनन्दी' चाहे क्रांति।। (5)

शांत व अशांत मन से लाभ व अलाभ

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू मन को शांत करोऽऽऽ
शांत मन से अधिक लाभ होतेऽऽ अशांत मन से अलाभ अनेकऽऽऽ

तन से अधिक मन की शक्तिऽऽ शक्ति का तू सदुपयोग करऽऽ
शांत मन से होता शक्ति का सदुपयोगऽऽ अशांत मन से शक्ति का दुरुपयोगऽऽ
शांति से शक्ति का (होता) संवर्द्धनऽऽ (1)

शांत मन से होता सहज अनुभवऽऽ जीवन होता प्रसन्न व शांतऽऽ
उदारता सहिष्णुता एकाग्रता बढ़तीऽऽ बढ़ते धैर्य-संतोष प्रोत्साहनऽऽ
बढ़े आशावाद लचीलापनऽऽ (2)

समता बढ़ती निद्रा अच्छी आतीऽऽ जीवन (होता) तरोताजा व हलकाऽऽ
आदर सत्कार सम्मान बढ़तेऽऽ नवीन-नवीन ज्ञान उत्पन्नऽऽ

उत्तम कार्य में पुरुषार्थ महान्ऽऽ (3)

तन-मन-आत्मा होते स्वस्थ्य सबलऽऽ प्रेम-संगठन होते प्रबलऽऽ
अन्याय-अत्याचार पापाचार न होतेऽऽ फैशन-व्यसन आडम्बर कमऽऽ
वाद-विवाद-कलह द्वंद्व कमऽऽ (4)

अशांत मन से होते इससे विपरीतऽऽ भय-व्यग्रता-उतावलापनऽऽ
कुंठा-अस्थिरता व अनिद्रा होतीऽऽ चिंता-अशांति-विषमतापूर्णऽऽ
धैर्य व निर्णय क्षमता में न्यूनऽऽ (5)

सौहार्द्र-सदाचार-आत्मविश्वास न्यूनऽऽ ईर्ष्या-घृणा-आलोचना में वर्द्धमानऽऽ
तनाव-उदासीन-किंकर्त्तव्यमूढ़ऽऽ होते आलास्य-प्रमाद-एकलापनाऽऽ
अल्प भी दुःख से होता खेद खिन्नऽऽ (6)

नशीली-वस्तु प्रति आकर्षणऽऽ अन्याय-अत्याचार प्रति आकर्षणऽऽ
ईर्ष्या-द्वेष-घृणा व निन्दा-अपमानऽऽ होते वाद-विवाद-कलहऽऽ
सात्विक/(पौष्टिक) भोजन में न लगे मनऽऽ (7)

अशांत मन से न (होते) ध्यान-अध्ययनऽऽ मनन-चिंतन-स्मरणऽऽ
शोध-बोध व अनुभव न होतेऽऽ न (होते) आत्मा व परम सत्य ज्ञानऽऽ
(अस्वच्छ व)/चंचल जल में न पड़े (यथा) प्रतिबिंब समऽऽ (8)

ध्यान-अध्ययन आत्मशुद्धि हेतुऽऽ करो मन को शांत संयतऽऽ
आध्यात्म शक्ति द्वारा मनातीत बनोऽऽ जिससे बनोगे अनंतगुणीऽऽ
'कनक' करो मन को स्वाधीनऽऽ (9)

विकल्प-संकल्प-संक्लेश नाश हेतु मेरी साधना

(विकल्प से संकल्प व संक्लेश (दुःख-चिन्तादि))

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू काहे विकल्प करेऽऽऽ
विकल्प से संकल्प-संकल्प से संक्लेशऽऽ चैनरियेक्सन से चलेऽऽऽ...(ध्रुव)...

सुखी-दुःखी हूँ या हर्ष-विषाद (या)ऽऽ मन में उत्पन्न नाना समस्याएँऽऽ
क्या होगा या क्या न होगा रूपीऽऽ विभिन्न विषम कल्पनाएँऽऽ

त्यज ये विकल्प ज्वालाएँऽऽ
लीन हो समता शांति मेंऽऽ...जिया...(1)...

अनात्म तत्त्व को अपना माननाऽऽ होता है संकल्प या कामनाऽऽ
तन-मन-धन-नाम-मान आदिऽऽ राग द्वेष मोह काम क्रोध तृष्णाऽऽ
इन्हें स्व मानना संकल्प-कामनाऽऽ
इन्हें त्याग हेतु करो दृढ संकल्प/(प्रतिज्ञा)ऽऽ...जिया...(2)...

संकल्प-विकल्प से होता है संक्लेशऽऽ संक्लेश है मलिन-परिणामऽऽ
चिन्ता-तनाव व उदासीनता-भयऽऽ राग द्वेष मोह से क्षोभित परिणामऽऽ
कर्मबंध के ये प्रमुख कारणऽऽऽ
समस्त दुःख इसी से जायमानऽऽ...जिया...(3)...

तू तो चेतन स्वतंत्र व मौलिकऽऽ स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-अविनाशीऽऽ
अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्यमयऽऽ अनंत वैभवधारी अविभागीऽऽ
स्व-स्वरूप में बनो विश्वासीऽऽ...जिया...(4)...

अनुभव भी तेरे हो रहे अनेकऽऽ तीनों के त्याग से लाभ अनेकऽऽ
समता-शांति-निस्पृहता बढ़तीऽऽ साधना व होती प्रभावनाऽऽ
भक्त शिष्यों की बढ़ती भावनाऽऽ
सेवा दान में बढ़ती भावनाऽऽ...जिया...(5)...

विकल्प-संकल्प-संक्लेश त्यागकरऽऽ निर्विकल्प स्व-संकल्पी तू बनऽऽ
निस्पृह-निराडम्बर-निष्कम्प निर्भयऽऽ आत्मनिर्भर-स्वावलंबी तू बनऽऽ
शुद्ध-बुद्ध-आनंद घनऽऽ
'कनक' स्वयं में बनो परिपूर्णऽऽ...जिया...(6)...

सीपुर, दिनांक 20.10.2016, मध्याह्न 12.37

(भक्त व शिष्यगण जो स्वभावना से प्रेरित होकर दिनोंदिन सेवा-दानादि करते उससे शिक्षा लेने के लिए, आत्म-संबोधन के लिए यह कविता बनी।)

आकर्षण-विकर्षण त्याग से पाऊँ समता-शांति

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू समता धारणकरऽऽऽ!

आकर्षण-विकर्षण-द्वन्द्व रहितऽऽ समता धारण करऽऽ...(ध्रुव)...

आकर्षण होने पर विकर्षण होगाऽऽऽ जिससे उत्पन्न होगा द्वन्द्वऽऽऽ
जिससे समता-स्थिरता न होगीऽऽऽ जिससे न मिलेगी निर्बाध-शांतिऽऽ
जिससे न मिलेगी मुक्तिऽऽ।। जिया रे...

मोह-राग-लोभ-इच्छा-आसक्ति सेऽऽ होता है आकर्षण-विभावऽऽ
आकर्षण होने पर होता है विकर्षणऽऽ जिससे होते अस्थिर-द्वन्द्वऽऽ
जिससे न होते गंभीर-धैर्यऽऽ।। जिया रे...

विकर्षण से होते ईर्ष्या-घृणा-द्वेषऽऽऽ अरति-भय-जुगुप्सा-ग्लानीऽऽऽ
आकर्षण से होते कामभोग-उपभोगऽऽ फैशन-व्यसन-विलासिता आदिऽऽ
(जिससे) होते क्षोभ-द्वन्द्व-अशांतिऽऽ।। जिया रे...

जिससे होते अन्याय-अत्याचारऽऽ शोषण-मिलावट-भ्रष्टाचारऽऽऽ
वाद-विवाद कलह-विषमवादऽऽ आक्रमण-युद्ध-आतंकवादऽऽ
जिससे पापकर्म होते बंधऽऽऽ।। जिया रे...

इससे संसार में भ्रमण होताऽऽऽ जिससे मिलते अनेक दुःखऽऽऽ
श्रृंखलाबद्ध क्रिया-प्रतिक्रिया चलतीऽऽ मिलती न मुक्ति व शांतिऽऽ
अतः आकर्षण-विकर्षण त्यजऽऽ।। जिया रे...

दोनों के त्याग से समता आयेगीऽऽऽ ध्यान-अध्ययन में होगी वृद्धिऽऽऽ
आत्मविशुद्धि-आत्म-उन्नति होगीऽऽ जिससे मिलेगी मुक्ति व शांतिऽऽ
'कनक' की अंतिम परिणतिऽऽ।। जिया रे...

सीपुर, दिनांक 21.10.2016, रात्रि 1.08

स्व-आत्मज्ञान से पूर्व-वर्त्तमान-भविष्य

(चाल : आत्मशक्ति....., सायोनारा.....)

अनंत काल से अनंत भावों में, जो न पाया मैं आत्मा का ज्ञान/(सत्य ज्ञान)।
उस ज्ञान को पाकर अभी मेरा, धन्य हो गया मानव जन्म (जीवन)।।

अनंत काल से पंचपरिवर्तन में, पाया मैं अनंत जन्म-मरण।
चार गति चौरासी लक्ष्य योनि में, पाया मैं अनंत दुःख-दैन्य।।

अज्ञान-मोह-राग-द्वेष आदि, इसी हेतु मेरा मुख्य कारण।
इसी से विपरीत अभी आत्मज्ञान से, कर रहा हूँ अज्ञान मोह हनन।।

अज्ञान-मोह से अनात्म तत्त्व को, मान रहा था 'मैं' 'मेरा' व 'मैं'।
तन-मन-इन्द्रिय व जन्म-मरण को, मान रहा था 'मैं' 'मेरा' व 'मैं'।।

इस हेतु मैं राग-द्वेष-मोह किया था, ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा व काम-क्रोध।
सुख-दुःख-भय-आशंका चिन्ता, वैर-विरोध-आक्रमण-युद्ध।।

आहार-निद्रा-मैथुन-परिग्रह (हेतु), शत्रु-मित्र भाई-बंधु के हेतु।
जय-पराजय सत्ता-संपत्ति हेतु, किया राग द्वेष ख्याति पूजा हेतु।।

क्रिया-प्रतिक्रिया रूपी चैनरियेंस्केन से, चक्कर काट रहा था संसार में।
तथापि स्वयं को (ही) श्रेष्ठ-ज्येष्ठ मानकर, किया हूँ अहंकार-ममकार मैं।।

सातिशय पुण्य उदय के कारण अभी, पाया हूँ आत्मज्ञान अभूतपूर्व।
तीन लोक की भौतिक संपत्ति से भी, अतुलनीय मेरा आध्यात्मिक वैभव।।

आध्यात्मिक मेरी संपत्ति के समकक्ष, इन्द्र चक्रवर्ती की भी न संपत्ति श्रेष्ठ।
मेरी संपत्ति अक्षय अनंत तक, इन्द्रादि की संपत्ति क्षय-भौतिक।।

ऐसा वैभव पाकर अभी (मैं) कर रहा हूँ, इसका ही श्रद्धानज्ञान आचरण।
मनन-चिन्तन ध्यान-अध्ययन, शोध-बोध व लेखन-प्रवचन।।

इसी से अतिरिक्त कुछ न प्रयोजन, ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि धन-जन।
इसी हेतु ही मौन-एकांत साधना, समता-शांति निस्पृह आराधना।।

इसी से हो रही मेरी आत्मविशुद्धि, संतुष्टि-तृप्ति व आत्मानुभूति।
स्वतंत्र-स्वावलंबी व उदार-पावन, 'कनक' अनुभव करे निजात्मज्ञान।।

इसी से आगे होगा मेरा आत्मविकास, कर्मनाश से मुझे मिलेगा मोक्ष।
स्व-आत्मज्ञान का मेरा यथार्थ फल, आत्मज्ञान को (श्रेष्ठतम) माने 'कनक' अतः श्रेष्ठ।।

सीपुर, दिनांक 19.10.2016, रात्रि 8.52

अन्तर्ज्ञान

-पीटर बरवॉश

मैंने छह वर्षों तक संसार भर के लीडरों का अध्ययन किया है और

उनमें से 99.9 प्रतिशत ने कहा कि अन्तर्ज्ञान तर्क से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। तर्क वह है जो आपने सीखा है। अन्तर्ज्ञान वह है जो आप हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि आप व्यावहारिक होकर तर्क व सहज बुद्धि का इस्तेमाल नहीं कर सकते, लेकिन वह पहली भावना बहुत, बहुत महत्त्वपूर्ण है।

''अपने हृदय और अन्तर्ज्ञान का अनुसरण करने का साहस रखें। क्या पता कैसे वे पहले से ही जानते हैं कि आप वाकई क्या बनना चाहते है।''

-स्टीव जॉब्स
ऐप्पल इन्कॉर्पोरेटिड के सह-संस्थापक
-मेस्टिन किप

अन्तर्ज्ञान वह बुनियादी औजार है, जिसकी जरूरत आपको अपने सपने को हकीकत में बदलने के लिए होती है। अपने अन्तर्ज्ञान पर भरोसा नहीं करेंगे, तो आप बार-बार गिरेंगे।

अन्तर्ज्ञान का ज्ञान वह कौंध है, जो जब आती है तो बहुत प्रबल और सम्मोहक भावना के साथ आती है। यह भावना हमें अपने जीवन में होने वाली किसी चीज के साथ एक खास तरीके से जाने के लिए प्रेरित करती है। या कई बार किसी खास तरीके से न जाने के लिए। हालाँकि भावना हमेशा त्वरित और प्रबल होती है, लेकिन लोग अक्सर इस अविश्वसनीय संप्रेषण पर शंका करने और उसकी बात नकारने वाले अपने चेतन मन की आवाज को मान लेते हैं।

-माइकल ऐक्टन स्मिथ

दिल की आवाज में मेरा बहुत विश्वास है। बहुत से लोग इसे बकवास मानते हैं, क्योंकि इसके समर्थन में कोई आँकड़े नहीं होते, लेकिन मैं मानता हूँ कि वहाँ पर कुछ न कुछ तो होगा, क्योंकि हमारा अवचेतन मन हमारे चेतन मन से कहीं ज्यादा चीजें पकड़ लेता है और अवचेतन हमसे जिस तरह बोलता है, वह हमारे दिल की आवाज के जरिये होता है। जब किसी व्यक्ति या किसी स्थिति के बारे में मन में कोई भावना उत्पन्न होती है, तो उसे सुनना बहुत, बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। मेरे अनुभव में इसने फायदा नहीं पहुँचाने के मुकाबले, उससे कहीं ज्यादा बार फायदा पहुँचाया है।

हालाँकि विज्ञान अब तक यह नहीं खोज पाया है कि हमारा अन्तर्ज्ञान क्या है या यह कहाँ से आता है, लेकिन प्राचीन ग्रंथों में बताया गया है कि अन्तर्ज्ञान वह ज्ञान है, जो शाश्वत मस्तिष्क कही जाने वाली उच्चतर स्तर की

चेतना से आता है। यह ज्ञान तरंगों के जरिये हमारे अवचेतन मन तक संप्रेषित किया जाता है। तब ये तरंगें मस्तिष्क और हमारे शरीर की खास अंतःस्त्रावी ग्रंथियों तक संचारित की जाती हैं, जो उस ज्ञान की इस तरह व्याख्या करती हैं, ताकि हम समझ लें। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जब हमें अन्तर्ज्ञान का कोई आवेग मिलता है, तो यह प्रायः हमारे पेट या दिल के आस-पास ही एहसास या आभास के रूप में क्यों आता है।

सरल भाषा में कहें, तो आपका अन्तर्ज्ञान सृष्टि के साथ संवाद है। शाश्वत मस्तिष्क अपने दृष्टिकोण से भविष्य को सटीकता से देख सकता है, इसलिए सृष्टि आपको एक खास राह पर चलने के लिए प्रेरित कर रही है। जब भी आपको संप्रेषण मिले, उस पर शंका न करें। चाहे इसके विरोध में कितने भी प्रमाण दिख रहे हों, अपने अन्तर्ज्ञान पर भरोसा करें, क्योंकि सृष्टि रास्ता जानती है।

-जॉन पॉल डिजोरिया

मैं लोगों को नौकरी पर रखते समय मुख्यतः अन्तर्ज्ञान के हिसाब से काम करता हूँ-यानि मैं उनके बारे में कैसा महसूस करता हूँ। अगर मैं किसी कारोबारी स्थिति में हूँ और मैं किसी के साथ व्यवसाय करने पर विचार करना चाहता हूँ, तो मैं अन्तर्ज्ञान की दिशा में जाता हूँ, क्योंकि आत्मा महसूस करती है।

-लेन बीचली

हम अपने अन्तर्ज्ञान के मूल्य को कम आँकते हैं। हम अपने सहज बोध पर विश्वास करने में असफल रहते हैं। मैंने अपनी कुछ सबसे बड़ी गलतियाँ तब की हैं, जब मैंने अपने अन्तर्ज्ञान की बात नहीं सुनी या अगर सुनी भी, तो मैंने उस पर सवाल किया। यह महत्त्वपूर्ण है कि आप इस पर भरोसा करना सीख लें। हो सकता है कि आपने अनजाने में ही अपने अन्तर्ज्ञान का द्वार बंद कर दिया हो, जैसा हममें से कई लोगों ने किया है, लेकिन आप अपने अन्तर्ज्ञान की योग्यताओं को दोबारा जाग्रत कर सकते हैं। हमारे अन्तर्ज्ञान का उपयोग ही इसे शक्तिशाली बनाता है। इसी कारण आप सफल लोगों को इस पर इतना ज्यादा भरोसा करते देखते हैं। उन्होंने अपने अन्तर्ज्ञान पर भरोसा किया, उन्होंने इसका अनुसरण किया, उन्होंने इस पर अमल किया और ऐसा करने पर अन्तर्ज्ञान की उनकी योग्यताएँ बहुत बढ़ गईं। ज्यादातर

सफल लोग जो भी निर्णय लेते हैं, लगभग हर निर्णय में अपने अन्तर्ज्ञान का इस्तेमाल करते हैं।

–लेअर्ड हैमिल्टन

जब भी मेरे मन में कोई सहज बोध आता है, तो मैं उस पर अमल करता हूँ। दिलचस्प बात यह है कि जब आप उस पर काम करने के बारे में सचेत होते हैं, तो आप उसमें बेहतर बन जाते हैं। दरअसल यह जीवन की एक ऐसी योग्यता है, जिसमें आप बेहतर बन सकते हैं।

अपने अन्तर्ज्ञान पर बस भरोसा करने और इसका ज्यादा बार अनुसरण करने के अलावा आपके अन्तर्ज्ञान की योग्यता बढ़ाने का एक आसान तरीका है। सवाल पूछें!

जब आप सवाल पूछते हैं, तो आपको आपके अन्तर्ज्ञान से जवाब ''मिलता'' है। आप शुरुआत में आसान सवाल पूछ सकते हैं। ऐसे सवाल, जिनके जवाब की आप तुरंत पुष्टि कर सकते हैं, जैसे, ''कोई व्यक्ति किस समय आएगा?'' या ''कोई खास व्यक्ति आज किस रंग के कपड़े पहनने वाला है?'' जब आपका फोन बजता है, तो आप नंबर देखे बिना पूछें, ''मुझे कौन फोन कर रहा है?'' कई बार आपका दिमाग जवाब देने की कोशिश करेगा, लेकिन अगर आप सवाल पूछते समय अपने दिमाग को शांत रख सकें, ताकि यह ग्रहण करने की अवस्था में रहे, तो अभ्यास के साथ फोन करने वाले व्यक्ति का नाम आपके जेहन में तुरंत कौंध जाएगा।

किसी सवाल को पूछने या किसी समाधान को माँगने में उसी प्रक्रिया का इस्तेमाल होता है, जिसके जरिये शाश्वत मस्तिष्क आप तक जवाब पहुँचाता है, बस इसकी दिशा बदल जाती है। सवाल पूछते वक्त आप अपना प्रश्न शाश्वत मस्तिष्क की ओर संचारित करते हैं। शायद अब आप समझ गए होंगे कि ऐसा कैसे होता है कि जब उद्यमी आदर्श विचार माँगते हैं जिसकी संसार को उस समय जरूरत है, तो उन्हें एक विचार मिलता है, जो अंततः ठीक वैसा ही साबित होता है, जिसकी संसार को उस वक्त जरूरत होती है!

जब आप अपने अन्तर्ज्ञान को बेहतर बनाते हैं, तो आपको खास चीजें करने की अधिक अन्तर्ज्ञानी प्रेरणाएँ मिलती रहेंगी, और जब वे सही साबित होती हैं, तो कई सफल लोगों की तरह ही आप भी अपने अन्तर्ज्ञान पर भरोसा करने लगेंगे और

जान जायेंगे कि यह आपकी सबसे शक्तिशाली योग्यताओं में से एक है।

कतिपय आगम के सूत्र–मेरे प्रायोगिक अनुभव में

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा.....)

आगम सूत्रों का करूँ स्वयं में प्रयोग, पढ़ना-पढ़ाना ही नहीं है संयोग।
पुस्तकीय रटन्त विद्या से न मिले मोक्ष, कंप्यूटर, टी.वी. को न मिलता मोक्ष।। (1)

'अहमेक्को खलुसुद्ध' आगम में पढ़ रहा, श्रद्धा-प्रज्ञा व अनुभव कर रहा।
द्रव्य-नाम-नोकर्म तो पर रूप है, शुद्ध-बुद्ध-एकत्व मेरा रूप।। (2)

'सव्वे सुद्धाहु सुद्धणया' आगम में पढ़ा हूँ, हर जीव प्रति (मेरा) भाव ऐसा कर रहा हूँ।
कर्म से युक्त जीव अशुद्धमय, कर्म मुक्त हर जीव शुद्ध-बुद्ध।। (3)

'आदहिदं कादव्वं' वर्णन जिनागम में, ऐसा ही भाव-व्यवहार मेरे लक्ष्य में।
आत्महित करना अति दूरूह होता, आत्महित दीपक सम परहित करता।। (4)

'इच्छा निरोध तप' का वर्णन ग्रंथों में, मेरी भी तपस्या है इसी भाव में।
ख्याति पूजा लाभ हेतु न होती तपस्या, निस्पृह-समतायुक्त होती तपस्या।। (5)

'वंदे तद्गुण लब्धये' वर्णन ग्रंथ में, मेरा भी लक्ष्य ऐसा ही (स्तुति) वंदना में।
देव के गुण प्राप्त करना मेरा लक्ष्य, सांसारिक क्षुद्र लाभों का नहीं लक्ष्य।। (6)

'धम्मो सो सम्मोत्ति णिदिठट्ठ' कहा ग्रंथ में, साधना करूँ मैं सदा साम्य भाव में।
राग द्वेष मोह ईर्ष्या तृष्णा से परे, साधना करूँ मैं लौकिक कामना परे।। (7)

'मैत्री-प्रमोद-करूणा-साम्य' का सूत्र, नाना जीव प्रति भाव से करूँ ग्रंथित।
हर जीव प्रति मैत्री प्रमोद गुणीजन में, दुःखी प्रति करूणा व साम्य विरोध में।। (8)

'धर्म सर्व सुखाकर हितकर' कहा ग्रंथों में, अनुभव हो रहा मुझे हर क्षेत्र में।
'समता-शांति-शुचिता' है धर्म, विषमता-अशांति-अशुचि अधर्म।। (9)

'वस्तु स्वभाव धर्म' ऐसा जाना ग्रंथ से, विभाव वस्तु स्वरूप अधर्म सिद्ध इसी से।
हर क्षेत्र में ऐसा ही अनुभव हो रहा, 'कनक' स्व-वस्तु स्वभाव पा रहा।। (10)

'परिणामेण बंध-मोक्ष' जिनशासन कहा, हर क्षेत्र में (यह) अनुभव में आया।
राग द्वेष मोह ईर्ष्या घृणा तृष्णा से, भावात्मक बंध होता जाना स्वयं में।। (11)

समता-शांति-निस्पृहता भाव से, ख्याति पूजा लाभ द्वन्द्व रिक्त से।
स्वतंत्र-स्वावलंबन का करूँ अनुभव, आत्मविकास हेतु 'कनक' बनाया काव्य।। (12)

सीपुर, दिनांक 18.10.2016, रात्रि 9.35

आत्मगुण स्मरण-कथन आदि से मुझे लाभ

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! (तू) आत्म-गुण-स्मरण कर।
आत्मगुण-स्मरण से बढ़ते आत्मगुणऽऽऽ क्षीण होते विभाव परिणामऽऽ...(ध्रुव)...

स्व-आत्मगुण (है) अनंतज्ञान दर्शनऽऽ सुखवीर्य अस्तित्व वस्तुत्वऽऽ
समता-शांति-सत्य-शौचऽऽ विनय सहिष्णुता क्षमादि भावऽऽ
आत्मविशुद्धि आत्मानुभवऽऽ...जिया रे...(1)...

उक्त गुणों के स्मरण-मनन-चिंतन सेऽऽ लेखन-प्रवचन-ध्यान सेऽऽ
होते हैं उक्त गुणों में विकासऽऽ होते विभाव भाव में ह्रासऽऽ
संकल्प-विकल्प-संक्लेश विनाशऽऽ...जिया रे...(2)...

पर परिणति न होती परचिंताऽऽ राग द्वेष मोह न विकथाऽऽऽ
परनिंदा-अपमान-अनादर-ईर्ष्या (घृणा)ऽऽ न आकर्षण-विकर्षण-द्रोहऽऽ
जिससे चित्त होता स्वयं में स्थिरऽऽ...जिया रे...(3)...

चित्त स्थिर से होते आत्मगुण वृद्धिऽऽ आगम में भी यह हैं प्रसिद्धऽऽ
एकाग्रचिंता निरोध शुक्लध्यान सेऽऽ अनंत ज्ञानदर्शन सुखवीर्य प्राप्तिऽऽ
शुद्ध-बुद्ध-आनंद प्राप्तिऽऽ...जिया रे...(4)...

अनुभव में आता यथायोग्य अनुभवऽऽ विज्ञान में भी हो रहा शोध-बोधऽऽ
तनाव-उदासीनता-डिप्रेशन घटतेऽऽ तन-मन-इन्द्रियाँ भी स्वस्थ्यऽऽ
बुद्धि संवेदन में होता विकासऽऽ...जिया रे...(5)...

बिना धन-जन व साधन बिनाऽऽ इसी से होता आत्मविकासऽऽ
हर समय हर कार्य-कलाप मेंऽऽ आत्मगुण-स्मरण से लाभ विशेषऽऽ
(अतः) 'कनक' करो आत्मगुण स्मरणऽऽ...जिया रे...(6)...

मोही-रागी-द्वेषी-कामी-क्रोधी जनऽऽ न कर पाते आत्मगुण स्मरणऽऽ

तन-मन-धन-मान-नाम-जन केऽऽ करते स्मरण-चिंता कथनऽऽ
इसी से होता (उनका) आत्म पतनऽऽ नवकोटि से न करो अनुमोदनाऽऽ...जिया रे...(7)...

सीपुर, दिनांक 17.10.2016, मध्याह्न 2.57

उत्तरोत्तर निर्विकल्प-ज्ञानानंद हेतु मेरी साधना

(चाल : आत्मशक्ति....., तुम दिल की....., शायद मेरी.....)

कोई समझे या न भी समझे, मुझे तो परम सत्य को जानना/(मानना) है।
कोई क्या करता या न करता, मुझे आत्म तत्त्व को ही पाना है।।

इन्द्रियाँ तो जानती है बाह्य वस्तु, मन होता है चंचल व निम्नगामी।
मुझे देखना है मेरा अन्तःकरण/(परमात्मा), जिससे मैं बनूँ ध्रुव ऊर्ध्वगामी।।

परपरिणति से विभाव होता, विभाव से होता कर्मबंध।
कर्मबंध से होता संसार भ्रमण, जन्म-जरा रोग व दुःख-मरण।।

रागी-द्वेषी-मोही-कामी-क्रोधी जीव, स्व-भाव से रहते हैं विपरीत।
अतएव उन्हें आत्म स्वभाव का, नहीं होता विश्वास व ज्ञान-भान।।

उन्हें चाहिए सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि, भोगोपभोग-वर्चस्व में रूचि।
यथा जोंक को चाहिए अशुद्ध रक्त, तथा वे भी होते संसार (में) आसक्त।।

तो भी मानते स्वं को सच्चा-अच्छा, महान्-नैतिक व गुणवान् ऊँचा।
धार्मिक-आदर्श-ज्ञानी-उपदेशकर्त्ता, उपदेश क्या दूँ उन्हें स्व का बनूँ उपदेष्टा।।

स्वप्रकाशी मैं स्वयं ही बनूँ, मेरे प्रकाश से स्वतः हो प्रकाशित।
अन्य के न बनूँ मैं कर्त्ता-धर्त्ता, राग-द्वेष मोह (घृणा) न ईर्ष्या-चिंता।।

स्वयं की रेखा मैं बढ़ाता जाऊँ, अन्य की रेखा की मैं चिंता छोड़ूँ।
पर नियंत्रण दबाव प्रलोभन से, कभी अस्त-व्यस्त न संत्रस्त बनूँ।।

उक्त भाव-व्यवहार व अनुभव से, मेरे ज्ञान-ध्यान-तप-त्याग बढ़ रहे।
समता-शांति-निस्पृहता बढ़ रही, आत्मविशुद्धि-आत्मानुभूति बढ़ रही।।

सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि वालों से, मुझे अधिक आत्म संतुष्टि मिल रही।
दीन-हीन-अहंकार हो रहे क्षीण, ईर्ष्या द्वेष घृणा तृष्णा हो रहे क्षीण।।

आत्मविश्वास मेरा हो रहा है दृढ़, अन्य से अप्रभावी होता चित्त स्थिर।
ज्ञानानंद बढ़ रहा उत्तरोत्तर, 'कनक' बन रहा निर्विकल्प उत्तरोत्तर।।

सीपुर, दिनांक 14.10.2016, रात्रि 9.27

(योगेन्द्र ने लंडन के लोगों की नैतिक भाव-व्यवहार-अनुशासन के बारे में मुझे बताया जिससे प्रेरित होकर यह कविता बनी।)

धर्म सुखकारी बने तो कैसे!?

(सुखकारी धर्म से क्यों मिलता है दुःख!?)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

हर पंथ-मत-संप्रदाय तो धर्म को सुख का हेतु कहता है।
किन्तु धर्म के कारण से मानव अधिकतर तो दुःखी होता है।। (1)

इसके कारणों का अनुसंधान मैं कर रहा हूँ दीर्घकाल से।
अनेक गद्य-पद्य साहित्यों में वर्णन कर रहा हूँ दीर्घकाल से।। (2)

संक्षिप्त में यहाँ कुछ कारणों का वर्णन कर रहा स्व-पर हित हेतु।
जिसे जानकर विश्व मानव कुधर्म त्यागकर, सेवन करे सुधर्म सुख हेतु।। (3)

स्वयं को पावन-शांत सुखी बनाना ही, यथार्थ से परम स्वधर्म/(सुधर्म)।
इसी हेतु ही धार्मिक क्रिया करना, साधनभूत होता है धर्म।। (4)

सनम्र सत्यग्राही उदारभावी स्व-पर-उपकारी समताधारी।
सरल-सहज विनम्र स्वभावी दान-दया-सेवा व गुणधारी।। (5)

क्रोध मान माया लोभ रहित ईर्ष्या घृणा व तृष्णा रहित।
अन्याय-अत्याचार-दुराचार रहित शोषण-मिलावट-भ्रष्टाचार रिक्त।। (6)

हिंसा झूठ चोरी कुशील परिग्रह रहित फैशन-व्यसन आडम्बर रहित।
परनिंदा अपमान वैरत्व रहित क्षमा मृदुता सहज-सरलता युक्त।। (7)

इन गुणों को प्राप्त करने हेतु पूजा-प्रार्थना तीर्थयात्रा युक्त।
पर्व-महोत्सव पालन करना शुद्ध-सात्विक-शाकाहार भोजन युक्त।। (8)

इसी से होता है सुधर्म पालन जिससे स्व-पर को मिलता सुख।

तन-मन-आत्मा भी होते स्वस्थ्य सबल, इह-परलोक में मिलता सुख।। (9)

किन्तु रागी द्वेषी कामी क्रोधी स्वार्थी (मानव), उक्त कार्यों को नहीं करते।
किन्तु सुख हेतु संकीर्ण रूढ़ि से, केवल बाह्य क्रियाकाण्ड करते।। (10)

जो स्वयं की संकीर्ण-रूढ़ि से, अन्य प्रकार से धर्म करते।
उन्हें विधर्मी मानकर उनसे, ईर्ष्या द्वेष आदि अधर्म करते।। (11)

उन्हें कष्ट देने या मारने हेतु समस्त यथायोग्य पाप करते।
वैर-विरोध से लेकर हत्या-बलात्कार, आक्रमण युद्धादि करते।। (12)

इन सब कारणों से सुख के विपरीत, इह परलोक में दुःख पाते।
स्वर्ग-मोक्ष का सुख क्या मिलेगा, जब साक्षात् ही दुःख पाते।। (13)

आम हेतु यदि बबुल बोते, बबुल ही मिलेगा न मिलेगा आम।
अंधकार मिटाने को प्रकाश चाहिए, न प्रकाश हेतु चाहिए तम।। (14)

जो दीपक स्वयं प्रकाशित होता, उससे प्रकाश फैलता स्वतः।
जो धार्मिक होता है सच्चा, उससे मिलता स्व-पर को सुख।। (15)

सच्चा धार्मिक स्वयं ही पावन सुखी होता, अतः धर्म है आत्मनिष्ट।
संकीर्ण स्वार्थ पर भीड़ों का धर्म, नहीं होता है सुखप्रद।। (16)

पावन भाव से पालनीय सुधर्म, नहीं पालनीय संकीर्ण कट्टर धर्म।
भेड़ भेड़ियाचाल धर्म को त्यागकर, 'कनक' पालता है स्वधर्म।। (17)

सीपुर, दिनांक 15.10.2016, रात्रि 12.30 से 1.37

संदर्भ-

By Education I mean the all round drawing out of the best in child and man in Mind body and Spirit. -M.Gandhi.

मेरे विचार में शिक्षा के माध्यम से बालक एवं मनुष्य से संपूर्ण रूप से मानसिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक संरचना उन्नयन एवं रचनात्मक उन्नति करना है।

"Action is the end of thought." -रोम्यां रोलां

ज्ञान का अंतिम छोर कर्म है, अर्थात् ज्ञान के माध्यम से चारित्रिक उन्नति करना ज्ञान का फल है।

''अनंतशास्त्रं बहुलाश्च विद्या अल्पश्य कालो बहुविघ्नता च।
यत्सारभूत तदुपासनीयं हंसो यथा क्षीरमिवांबुमध्यात्।।''

अनंत शास्त्र हैं, बहु विद्याएँ हैं, काल अल्प है और विघ्न अधिक हैं, इसलिए जो सारभूत है, उसको ग्रहण करना चाहिए। जैसे-हंस क्षीर नीर को ग्रहण करता है।

''अंतो णात्थि सुदीणं कालो थोओ वयं च दुम्मेहा।
तण्णवरि सिक्खिदव्वं जं जरमरणं करवयं कुणई।।''

शास्त्रों का अंत नहीं है, काल अल्प है, आयु दुर्लभ है इसलिए इस प्रकार शिक्षा ग्रहण करना चाहिए जिससे जन्म-मरण रूपी अनंत दुःख नष्ट होंगे।

अनेक लोगों की भ्रांत धारणाएँ अज्ञान के कारण हो सकती है कि विज्ञान का प्रारंभ अभी-अभी कुछ ही शताब्दी में हुआ है परन्तु प्राचीन काल में विज्ञान नहीं था परन्तु प्राचीन प्राकृत-संस्कृत भारतीय एवं वैदेशिक साहित्य के सूक्ष्म परिशीलन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि पहले भी भारत में तथा विदेश में भी अत्यंत उन्नतशील विज्ञान था। केवल सैद्धांतिक विज्ञान उस समय में नहीं था वरन् प्रायोगात्मक विज्ञान अनेक क्षेत्र में कार्यान्वित था। संदर्भ के अनुसार इसी किताब में आगे यथा-समय इसका वर्णन किया जायेगा।

84 लाख योनि में तथा अनंतानंत जीवों में मनुष्य सर्वोत्तम जीव है क्योंकि मनुष्य एक चिंतनशील, विवेकशील, तर्कशील, शोध-बोध का इच्छुक, उदार, उपात्तमन वाला, प्रज्ञावान शमी-दमी, संयमी, आत्म प्रबुद्ध, महत्वाकांक्षी, सत्यान्वेषी, आत्म उन्नयन में दक्ष है। अन्य किसी भी जीव में इस प्रकार महान् गुण नहीं पाये जाते हैं। इस प्रकार मनुष्य भव प्राप्त करना दुर्लभ से भी अति दुर्लभ है। भोग-विलास, धन-संपत्ति, विपुल भौतिक सामग्री, इन्द्रिय जनित सुख आदि प्राप्त करना अत्यंत सरल है।

प्रत्येक जीव उदर पोषण इन्द्रिय तृप्ति वैषयिक भोग करने में अनादि काल से सतत प्रयत्नशील है, तो भी जीव को अतीन्द्रिय अभौतिक, शाश्वतिक, आत्मोत्थ, अनंत चिर सुख और शांति नहीं मिली है। चिर-सुख शांति की प्राप्ति केवल स्व-पुरुषार्थ, ज्ञान-विज्ञान, संयम, तप-ध्यान आदि के माध्यम से मनुष्य ही करने में समर्थ है। इसी प्रकार अद्भुत अचिन्त्य शक्ति सम्पन्न मनुष्य पर्याय को प्राप्त करके क्षुद्र विषय भोग, राग-रंग, द्वेष-कलह आदि में अपनी अलौकिक महती शक्ति को व्यय नहीं करना चाहिए। इस जन्म को प्राप्त करके अन्य जीव से असाध्य, असंभव, अलौकिक,

अद्भुत, अद्वितीयपूर्ण स्वातंत्र्य होना मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ परम पवित्र कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य के पालन करने में ही मनुष्य जन्म, ज्ञान और विवेक का सदुपयोग है।

जेण तच्चं विवुज्झेज्ज जेण चित्तं णिरुज्झदि।
जेण अत्ता विसुज्झेज्ज तं णाणं जिणसासणे।। (321)
जेण रगा विरज्जेज्ज जेण सेएसु रज्जदि।
जेण मित्ती पभावेज्ज तं णाणं जिण सासणे।। (322) मूलाचार (कुंद.)

जिससे तत्त्व का परिज्ञान होता है, जिससे अति चंचल चित्त का विरोध होता है, जिससे मलिन पतित आत्मा विशुद्ध हो जाती है, उसको जिनशासन में ज्ञान कहते हैं।

उसको, जिससे संसार शरीर भोगों के प्रति आसक्ति रूप-रंग से विरक्ति और अनासक्ति का भाव प्रगट होता है, जिससे मोक्ष रूपी (निःश्रेयस) सुख रूपी श्रेय पवित्र कार्य में रमायमाण होता है, जिससे प्रत्येक जीव के प्रति परम पवित्र भाव के विस्तार को प्राप्त होता है अर्थात् विश्व मैत्री भाव प्रसारित होता है, उसको विजयी भूत जिनशासन में ज्ञान कहते हैं।

''**सा विद्या या विमुक्तये**'' उसको विद्या कहते हैं, जिससे समस्त बंधनों से विमुक्ति मिलती है।

ज्ञान में महती शक्ति है, उस शक्ति को समस्त बंधनों को काटने के लिए प्रयोग करना चाहिए। यदि उस शक्ति को केवल तुच्छ भोग-विलास, स्वार्थ-सिद्धि के लिए लगायेंगे तो उसका केवल दुरुपयोग ही होगा। ज्ञान में अनंत शक्ति है, इसको वैज्ञानिक लोग भी मानते हैं। यथा-

The final corcusion is that we know very little and yet it is astonishing that we know so much, and still more astonishing that so little knowledge can give us so much power.

-The abc of Relativity. P. 144.

शेष निर्णय यह है कि हम लोग बहुत कम जानते हैं, तथापि यह परम आश्चर्य है कि उस क्षुद्र ज्ञान को ही हम बहुत अधिक जानते हैं, ऐसा मान बैठते हैं। पुनश्च और भी अति आश्चर्य यह है कि इस क्षुद्र ज्ञान ने भी हमें अति शक्ति प्रदान की है।

जैनाचार्यों ने कहा है-''**णाणं पयासणं**'' ज्ञान अभौतिक, अध्यात्मिक परं चिज्ज्योति स्वरूप है।

हिन्दू मनीषियों ने विश्व को एक दिव्य संदेश दिया है-''**नहिज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।**'' संपूर्ण विश्व में ज्ञान के समान परम पवित्र उत्कृष्ट वस्तु दूसरी नहीं है।

अनुभवी मनुष्यों ने बताया है ''**ज्ञानामृतं भोजनम्**'' ज्ञान रूपी अमृत भोजन है। इस ज्ञानामृत भोजन के माध्यम से जीव अमरत्व पद को प्राप्त करता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति विवेकी प्रबुद्ध मनुष्य को चाहिए कि वे ज्ञान रूपी अमृत का पान करके अजर-अमर शाश्वतिक सर्वोत्कृष्ट शुद्ध आत्मिक अवस्था को प्राप्त करके चिरशांति का अनुभव करें। इसलिए प्रत्येक मुमुक्षु सत्यप्रेमी, विवेकी मनुष्य का मैं आह्वान करता हूँ कि उठो, जागो, खड़े होओ और स्वयं के सत्य का अवलोकन करो, अपनी अनंत शक्ति को पहचानो, अपने परम पवित्र कर्त्तव्य का निर्णय करो, पुरुषत्व को जागृत करो, अनंत दुःख स्वरूप समस्त बंधनों को वीर-विक्रम, पुरुषार्थ से तोड़-फोड़ डालो और उस अमृत पद को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध होकर अद्वितीय साहस, धीरता-वीरता-गंभीरता से एक-एक अस्खलित कदम सत्य वैज्ञानिक धर्मरूपी मार्ग का निक्षेप करते हुए वीर विक्रम गति से आगे बढ़ो। इस प्रकार मार्ग में आपका दुनिया की कोई भी मानविक, पाशविक, भौतिक, यांत्रिक शक्ति प्रतिबंधक नहीं हो सकती। आपकी आध्यात्मिक अनंत शक्ति के कारण समुख हो सकती है। वे इस प्रकार विलय को प्राप्त हो जायेंगे, जिस प्रकार सहस्त्र रश्मि तेज सूर्य उदय होने से रात्रि का घना अंधकार भी विलीन हो जाता है। इस उदात्त स्व-परोपकार पवित्र विश्व कल्याणमयी भावना से प्रेरित होकर मैंने अपनी क्षुद्र बुद्धि से, स्व-अनुभव से, देश-विदेश के धर्म-दर्शन विज्ञान रूपी सत्साहित्य के यत्किंचित अध्ययन, चिंतन-मनन से धर्म-दर्शन-विज्ञान रूपी त्रिवेणी का संगम करने के लिए सविनय नम्र क्षुद्र प्रयास किया है। इस त्रिवेणी में अवगाहन करके संतृप्त अंतरात्मा अनंत सुख शांति को प्राप्त करे, यह मेरा परम लक्ष्य एवं परम ध्येय है। मैं सच्चिदानंद ''**सत्यं शिवं सुंदरम्**'' भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि हे दयामय परम कृपालु सर्वशक्तिमान अंतर्यामी भगवान्! सबकी अंतरात्मा जगे, खड़े होवे, अपने सत्य धर्म को पहचाने, पुरुषार्थ को जागृत करके चिरशांति को प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध होकर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़े एवं कृत कार्य करके अनंत सुख-शांति को प्राप्त करें।

''**असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय।**''

मृत्यो र्मा अमृतं गमय।

हे भगवान्! असत् से मेरे को सत्य की ओर ले चलो, अज्ञानरूपी अंधकार से ज्ञानरूपी परमचिज्योति की ओर ले चलो, मृत्यु से अमृत (मोक्ष) की ओर ले चलो।

''**पापं तमसो रवित्म् भजध्वम्।**''

पाप तमस नष्ट करने के लिए सूर्य के समान बनो।

"Deeds of darkness are committed in the dark."

हे! मानव नैतिक से धार्मिक व आध्यात्मिक बनो

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

मानव! तू नैतिक बनो!

नैतिक से धार्मिक बनोऽऽऽ आगे आध्यात्मिकऽऽऽ

नैतिक बने बिना न धार्मिक संभवऽऽ (यथा) भ्रूण बिना न प्रौढ़ मानव।
अन्याय-अत्याचार-भ्रष्टाचार-शोषणऽऽ आतंक परपीड़न कुशीलता।।
इसे त्याग बन नैतिकऽऽ...मानव...(1)...

परनिंदा अपमान चोरी-मिलावटऽऽ कर्त्तव्यहीन अनुशासनहीनताऽऽ
मद्य-माँस-नशीली वस्तु सेवन उत्पादनऽऽ क्रय-विक्रय अनुमति प्रदानऽऽ
इसे त्याग बन नैतिकऽऽ...मानव...(2)...

नैतिक बनकर धार्मिक बनोऽऽ आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र युक्तऽऽ
फैशन-व्यसन व ढोंग-पाखण्डऽऽ आडम्बर दिखावा अनर्थ कामऽऽ
इसे त्याग बन धार्मिकऽऽ...मानव...(3)...

सनम्र सत्यग्राही-उदार-पावन बनोऽऽ गुण-गुणिओं का करो आदरऽऽ
दान दया सेवा परोपकारी तू बनोऽऽ आत्म विकास हेतु प्रयत्न करऽऽ
राग द्वेष मोह विकार छोड़ऽऽ...मानव...(4)...

संसार-शरीर-भोगोपभोग-आसक्तिऽऽ ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि मुक्तिऽऽ
ज्ञान-ध्यान-तप त्याग प्रवृत्तिऽऽ निस्पृह-निराडम्बर-समता वृत्तिऽऽ
तब होगी आध्यात्मिक प्रवृत्तिऽऽ...मानव...(5)...

आत्मविशुद्धि से होगी आत्मानुभूतिऽऽ ज्ञानानंदमय निजानुभूतिऽऽ

संकल्प-विकल्प होंगे संक्लेश दूरऽऽ बनो शुद्ध-बुद्ध-आनंदपूर्णऽऽ
बनोगे आध्यात्मिक पूर्णऽऽ...मानव...(6)...
अन्यथा मानव तू बनोगे पाखण्डीऽऽ स्व-पर घातक बनोगे उद्दण्डीऽऽ
मानव रूप में बनोगे तुम दानवऽऽ (अतः) नैतिक से बनो आध्यात्मिकऽऽ
अतः 'कनक' बनाया काव्यऽऽ...मानव...(7)...

सीपुर, दिनांक 15.10.2016, रात्रि 8.55

संदर्भ-

भावार्थ-मोह की प्रबलता-जन्य चिरकाल का अज्ञान संस्कार जब हृदय से निकल जाता है तब स्वप्न में भी इस जड़ शरीर में आत्मा की बुद्धि नहीं होती। अतः उक्त संस्कार को दूर करने के लिए भेद विज्ञान की निरंतर भावना करनी चाहिए।

अपुण्यमव्रतैः पुण्यं व्रतैर्मोक्षस्तयोव्ययः।
अव्रतानीव मोक्षार्थी व्रतान्यपि ततस्त्यजेत्।। (83)

भावार्थ-मोक्षार्थी पुरुष को मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में जिस प्रकार पंच अव्रत विघ्न स्वरूप हैं उसी प्रकार पाँच व्रत भी बाधक हैं, क्योंकि लोहे की बेड़ी जिस प्रकार बंधकारक है उसी प्रकार सोने की बेड़ी भी बंधकारक है। दोनों प्रकार की बेड़ियों का अभाव होने पर जिस प्रकार लोक व्यवहार में मुक्ति (आजादी) समझी जाती है उसी प्रकार परमार्थ में भी व्रत और अव्रत दोनों के अभाव से मुक्ति मानी गई है। अतः मुमुक्षु को अव्रतों की तरह व्रतों को भी छोड़ देना चाहिए।

अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः।
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य परमं पदमात्मनः।। (84)

भावार्थ-प्रथम तो हिंसादिक पंच पापरूप अशुभ प्रवृत्ति को छोड़कर अहिंसादिक व्रतों के अनुष्ठान रूप शुभ प्रवृत्ति करनी चाहिए। साथ ही, अपना लक्ष्य शुद्धोपयोग की ओर ही रखना चाहिए। जब आत्मा के परम पद रूप शुद्धोपयोग की-परमवीतरागतामय-क्षीणकषायनामक गुणस्थान की-संप्राप्ति हो जावे तब उन व्रतों को भी छोड़ देना चाहिए। लेकिन जब तक वीतराग दशा न हो जावे तब तक व्रतों का अवलंबन रखना चाहिए, जिससे अशुभ की ओर प्रवृत्ति न हो सके।

यदन्तर्जल्पसंपृक्तमुत्प्रेक्षाजालमात्मनः।

मूलं दुःखस्य तन्नाशे शिष्टमिष्टं परं पद्म।। (85)

भावार्थ-यह जीव अपने चिदानंदमय परम अतीन्द्रिय अविनाशी निर्विकल्प स्वरूप को भूलकर जब तक बाह्य विषयों को अपनाता हुआ दुःखों के मूल कारण अन्तर्जल्परूपी अनेक संकल्प-विकल्पों के जाल में फँसा रहता है-मन-ही-मन कुछ गुनगुनाता अथवा हवा से बातें करता है-तब तक इसको परम पद की प्राप्ति नहीं हो सकती और न कोई सुख ही मिल सकता है। सुखमय परम पद की प्राप्ति उसी को होती है जो अंतर्जल्परूपी उत्प्रेक्षा जाल का सर्वथा त्याग करके अपने ही चैतन्य चमत्कार रूप विज्ञानघन आत्मा में लीन हो जाता है।

अव्रती व्रतामादाय व्रती ज्ञानपरायणः।

परात्मज्ञानसम्पन्नः स्वयमेव परो भवेत्।। (86)

भावार्थ-विकल्प जाल को जीतकर सिद्धि प्राप्त करने का क्रम अव्रती से व्रती होना, व्रती से ज्ञान भावना में लीन होना, ज्ञान भावना में लीन होकर केवलज्ञान को प्राप्त करना और केवलज्ञान से सम्पन्न होकर सिद्ध पद को प्राप्त करना है।

लिङ्ग देहाश्रितं दृष्टं देह एवात्मनो भवः।

न मुच्यन्ते भवात्तस्मात्ते ये लिङ्गकृताऽऽग्रहाः।। (97)

भावार्थ-जो जीव केवल लिंग अथवा बाह्य वेष को ही मोक्ष का कारण मानते हैं वे देहात्म दृष्टि हैं और इसलिये मुक्ति को प्राप्त नहीं हो सकते। क्योंकि लिंग का आधार देह है और देह ही इस आत्मा का।

इस तरह रोक दी आतंक ने दुनिया के विकास की रफ्तार

हर साल के साथ आतंकवाद और भयावह होता जा रहा है। इसके साथ ही दुनिया को होने वाले नुकसान में भी कई गुना इजाफा हो रहा है।

9/11 के समय से भी ज्यादा मुश्किल-3,44,138 करोड़ रुपये का घाटा 9/11 हमले के बाद 2014 में हुआ था।

3,53,160 करोड़ रुपये की चपत दुनिया को 2014 में, 2,19,640 करोड़ रुपये का नुकसान 2013 में हुआ था, 10.62 लाख करोड़ रुपये का नुकसान इराक 2005-2014 के बीच झेल चुका।

मुंबई हमले के बाद विकास दर पर लगी ब्रेक-आतंकवाद से लड़ाई के

लिए भारत को भी मोटी कीमत चुकानी पड़ रही है। 26 नवंबर, 2011 को मुंबई हमले के बाद बड़ी संख्या में विदेशी निवेशक वापस लौट गए, जिससे विकास दर प्रभावित हुई।

90,194 करोड़ रुपये विदेशी निवेशकों ने मुंबई हमले के बाद वापस खींचे, 9.3% से 7 फीसदी पर आ गई थी भारतीय जीडीपी की विकास दर।

आतंक की भेंट चढ़ रही जिंदगी–32,700 लोग दुनियाभर में मारे गए, 2014 में 416 भारतीय मारे गए, 2014 में 6 आतंकी हमले हो चुके है भारत में और इस साल 49 लोगों की जान हमलों में गई है।

राष्ट्रीय सुरक्षा पर खासा खर्च–आतंकी हमलों की बढ़ती आशंका के चलते दुनियाभर के देश अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूत करने में भी जुटे हुए हैं, 7,81,677 करोड़ पूरी दुनिया सुरक्षा पर सालाना खर्च करती है।

खुद कंगाल हो रहा है आतंक को पालने वाला पाक–पाकिस्तान भले ही आतंकवाद को पालने में लगा हुआ है, लेकिन इससे वह खुद भी नहीं बच पाया है। आतंकवाद की वजह से उसका घाटा लगातार बढ़ता ही जा रहा है।

'अहंकार' से परे 'स्वाभिमान'-'सोऽहं'-'अहं' भाव

(चाल : सायोनारा....., आत्मशक्ति.....)

जो स्वयं को सच्चिदानंद जानता/(मानता), 'स्वाभिमान'-'सोऽहं'-'अहं' भाव चाहता।
दीन-हीन-अहंकार भाव त्यागता, वह धार्मिक से आध्यात्मिक बनता।। (1)
तन-मन-धन-मान-नाम आदि को, स्व-स्वरूप न होने से पर मानता।
ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-तृष्णा-मोह आदि को, विभाव होने से त्यागना चाहता।। (2)
अन्याय-अत्याचार-पापाचार-शोषण, फैशन-व्यसन-दंभ-ढोंग-पाखण्ड।
परनिंदा-अपमान-अनादर-असुया, परअहित न करता जो स्वाभिमानी होता।। (3)
सरल-सहज-मृदुभावी होता, विनम्र-सत्यग्राही-उदारभावी होता।
मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ भावी होता, अंधानुकरण रहित अप्रभावी होता।। (4)
गुण-गुणी-आदर-बहुमान सहित, गरीब व छोटों से आदर भाव सहित।
महान् उद्देश्य-भावना-प्रयत्न युक्त, भौतिक उपलब्धियों को न मानता श्रेष्ठ।। (5)
अज्ञान-मोह व लौकिक/(स्वार्थ) विनय रहित, उद्दण्ड-उत्शृंखल-अनुशासनहीन रिक्त।

आत्मा से परमात्मा बनने हेतु यत्नसहित, 'कनक' भी स्व-उपलब्धि हेतु प्रयत्न युक्त।। (6)

सीपुर, दिनांक 18.10.2016, मध्याह्न 3.10

संदर्भ-

नजरिये का त्याग

जब एक आदमी झुकता है, तो परमेश्वर उसे क्षमा कर देता है। तिब्बती कहावत

मनुष्य के रूप में हम बहुत सौभाग्यवान हैं कि हमारे पास पाँच या शायद छः इन्द्रियाँ हैं, जिनके माध्यम से हम अपने आसपास के संसार को समझते व देखते हैं। लेकिन बावजूद इसके, ऐसा लगता है कि कभी-कभी हम एक निश्चित दृष्टिकोण को विकसित करने के प्रति प्रवृत्त रहते हैं, बजाय हर दिन या पल जो ला सकता है, उसके लिए तैयार रहने के। हम अपने पुराने रवैये और नजरिये से चिपके रहते हैं, जो पहले-पहल तो प्रत्येक व्यक्ति के नजरिये से देखने की कोशिश से ज्यादा आसान और सहज लगता है। लेकिन समस्या यह है कि मन तो एक बंद डिब्बे की तरह हो जाता है और नये विचार उसके अगल-बगल में गिरते रहते हैं क्योंकि हमें लगता है कि हमारा दिमाग पहले ही भरा हुआ है।

इस कठोर दृष्टिकोण के साथ हम या तो अहंकार की भावना को विकसित कर सकते हैं या उपद्रव की या फिर कट्टरता की। **हम 'अहम्' शब्द को अहंकार से जोड़ने लगते हैं; जिन लोगों को हम बहुत अहम् युक्त कहते हैं आमतौर पर वे लोग अति प्रबल और महत्त्वाकांक्षी होते हैं जबकि हम अधिक विनम्रता के साथ संबद्ध होते हैं। लेकिन शांत व्यक्ति, यहाँ तक कि बहुत संवेदनशील व्यक्ति में भी अहम् बहुत प्रबल हो सकता है।** आप देखें, यदि हम प्रत्येक चीज को बहुत व्यक्तिगत स्तर पर लेते हैं, तब अहम् ही है, जो एक बार फिर हम पर हावी हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे किसी अहंकारी व्यक्ति में अहम् बहुत बढ़-चढ़कर बोलता है। दोनों ही मामलों में, उनके अभिमान को बहुत चुभन महसूस होती है जिसके कारण एक व्यक्ति तो बहुत आक्रामक हो उठता है, जबकि दूसरे व्यक्ति के कार्य करने की गति अचानक बहुत बढ़ जाती है।

कई लोग ऐसे हैं जो बाहर से देखने पर पूर्णतः शांत दिखायी देते हैं, किन्तु जो हमेशा सही होने या संपूर्ण होने के असंभव से प्रयास में, अंदर ही अंदर बहुत अशांत

होते हैं। हल्की-सी आलोचना या छोटा-सा मजाक भी उनकी संवेदना पर काँटे के समान चुभन देता है और उन्हें ऐसा लगता है जैसे वे अंदर से बिल्कुल चूर-चूर हो जायेंगे। यहाँ बहुत सावधानी से काम लेना चाहिए वरना कुंठा या उत्तेजना की एक लहर उनके अंदर प्रबल होने लगती है और ऐसे में 'सही' और 'गलत' की भावना इतनी तीव्र होती है कि वह ऐसे व्यक्ति को आगे नहीं बढ़ने देती और जिस प्रकार वे प्रत्येक चीज को अपने दिल से लगा लेते हैं, उसी प्रकार कुछ लोग, जो बहुत मीन-मेख निकालते हैं, दूसरों की बहुत आलोचना भी कर सकते हैं। मन की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं होती कि वह शांत होकर बहता रहे, किन्तु वह हमेशा यही महसूस करता रहता है कि उसके विरुद्ध हमेशा बाधाएँ खड़ी रहती हैं, वह दूसरों की कमजोरियों की ओर तो इशारा करता है लेकिन स्वयं अपने बारे में बहुत संवेदनशील प्रतीत होता है, अपनी कमजोरियों को नजरअंदाज कर देता है।

आध्यात्मिक में है अनंत व्यापकता-रचनात्मकता-शाश्वतिकता-शांति

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा.....)

आध्यात्मिक सिखाता है व्यापक बन, भौतिकता परे भी आत्मा को मान।
लौकिक ज्ञान-विज्ञान से परे भी जान, जन्म-मरण से भी परे स्वयं को मान।। (1)

इन्द्रिय-ज्ञान से भी होता है ज्ञान, यांत्रिक ज्ञान से भी परे अनंत ज्ञान।
मानसिक ज्ञान परे आध्यात्म ज्ञान, कल्पना तर्क परे परम ज्ञान।। (2)

सांसारिक सुख परे आत्मिक सुख, तन-मन-अक्ष परे होता ये सुख।
भोगोपभोग परे होता यह सुख, आत्मा से आत्मा द्वारा आत्मा का सुख।। (3)

लौकिक विश्वास परे उक्त सभी का विश्वास, मूर्तिक विश्वास परे अमूर्तिक विश्वास।
जन-धन-मान हानि-लाभ से परे, अनंत शक्ति सम्पन्न आत्मा का विश्वास।। (4)

उक्त ज्ञान विश्वास युक्त जो चारित्र, सामान्य जन से परे (यह) आत्म चारित्र।
लौकिक नीति-नियम/(न्याय) कानून संविधान, इससे परे (यह) आध्यात्मिक चारित्र।। (5)

उक्त ज्ञान श्रद्धान-आचरण सहित, जो होते वे होते अधिक रचनात्मक।
चित्रकार से लेकर दार्शनिक वैज्ञानिक, (लौकिक) कवि जादूगर से भी अधिक रचनात्मक।। (6)

स्वात्मा को परमात्मा वे ही बनाते, आत्मा को परमात्मा बनाने की शिक्षा (वे) देते।
विश्वमैत्री विश्व शांति पाठ पढ़ाते, सर्वजीव अधिकार का न्याय बताते।। (7)
आत्म श्रद्धानी से साधु (व) सर्वज्ञ तक, होते आध्यात्मिक परम रचनात्मक।
ज्ञान-विज्ञान-संस्कृति के होते जनक, ऐसी ही रचनात्मक चाहे 'सूरी कनक'।। (8)
(किन्तु) मोही अज्ञानी इसे न माने रचनात्मक, आध्यात्मिक न माने मोही को रचनात्मक।
भौतिक रचनात्मक होते संसारी जीव, आध्यात्मिक रचनात्मक आध्यात्मिक जीव।। (9)

सीपुर, दिनांक 25.10.2016, रात्रि 8.45
(यह कविता विदेशी वैज्ञानिक टी.वी. चैनलों से भी प्रेरित है।)

संदर्भ-

सर्वज्ञ सर्वदर्शी विश्व के त्रिकालवर्ती समस्त गुण पर्याय को युगपत् स्पष्ट जानने, देखने से, उनके द्वारा प्रतिपादित दर्शन ही सम्यक् अनेकांत दर्शन है। समंतभद्र स्वामी कहते हैं-

नमः श्री वर्धमानाय निर्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।। (1) (रत्नकरण्ड)

अंतरंग, राग-द्वेष, मोह, अज्ञानता आदि कलंक को विनाश करके जो अनंत ज्ञान एवं अनंतदर्शन रूपी सर्वोच्च वर्धमान अवस्था को प्राप्त किया है, ऐसे सर्वज्ञ वीतराग भगवान् को मेरा नमस्कार हो।

जिनकी निर्मल विश्व विद्यारूपी दर्पण में लोकालोक स्पष्ट प्रतिबिंबित होता है उन सर्वदर्शी द्वारा अनेकांतात्मक दर्शन को जो स्याद्वाद रूपी अद्वितीय अलौकिक वाणी से प्रतिपादन किया गया हैं, वह वाणी संपूर्ण दोषों से रहित है।

अनवद्यः स्याद्वादस्तव दृष्टेष्टाविरोधतः स्याद्वाद।
इतरो न स्याद्वादो सद्वितय विरोधान्मुनीश्वराऽस्याद्वादः।। (28) (स्वयंभूस्तोत्रे)

आपका अनेकांत शासन दोष रहित है, कारण यह है कि वह प्रत्यक्षादि प्रमाण व आगम से विरोध न आये, इस तरह स्यात् या कथंचित् या किसी अपेक्षा से वस्तु के स्वभाव को यथार्थ कहने वाला है। इसके सिवाय जो एकांत मत है, वह प्रमाणभूत आगम नहीं है, क्योंकि हे मुनिश्वर! वह एकांत प्रत्यक्षादि प्रमाण आपके सत्य आगम से विरोध रूप है। इसलिए वह स्याद्वाद रूप नहीं है, अर्थात् भिन्न-भिन्न अपेक्षा से भिन्न-

भिन्न स्वभावों को सिद्ध करने वाला नहीं है।

स त्वमेवासि निर्दोषो, युक्ति शास्त्राऽविरोधिवाक्।

अविरोधो यदिष्टं ते, प्रसिद्धेन न बाध्यते।। (6) (देवागम वृत्ति)

हे वीतराग सर्वज्ञ सर्वदर्शी भगवान्! आप ही निर्दोष हैं, कारण आपके अनेकांतमय स्याद्वाद रूपी वचन आपके शासन (दर्शन) युक्ति, तर्क शास्त्र, प्रत्यक्ष आदि से निर्बाध अखण्डित है। जो दर्शन सत्य, परस्पर अविरोध है, वह किसी से भी खण्डित नहीं हो सकता है।

जो कर्म के पराधीन होने के कारण निर्मल, शुद्ध आत्मस्वरूप को प्राप्त नहीं किया है, वह कभी भी सर्वज्ञ, सर्वदर्शी नहीं हो सकता है। जो निर्दोष एवं सर्वदर्शी नहीं है उसका दर्शन (सिद्धांत) निर्दोष एवं अनेकांतमय सत्दर्शन नहीं हो सकता है।

त्वन्मतामृत बाह्यानां, सर्वथैकान्त वादिनाम्।

आप्ताभिमान दग्धानां, स्वेष्टं दृष्टेन बाध्यते।। (7) (देवागम स्तोत्र)

हे वीतराग सर्वदर्शी भगवन्! आपका दर्शन अमृत के समान है क्योंकि आपके सत्दर्शन रूपी अमृत का जो सेवन करता है वह जन्म-जरा-मरण रोग से रहित होकर मोक्षरूपी अमृत तत्त्व को प्राप्त कर लेता है। आपके दर्शन से बाह्य सर्वथा एकांतवादी जो कि स्वयं को आप्त (दर्शन के प्रवक्ता) मानकर अहंकार से जल रहा है उसका दर्शन प्रत्यक्ष रूप से बाधित होता है।

सर्वज्ञ वीतराग का दर्शन सम्यक् है। अन्य दर्शन सत्य तथ्य से अपूर्ण है। जिनके मत दर्शन, तर्क, आगम, प्रत्यक्ष, अनुभव अविरुद्ध हो उनका दर्शन ग्रहण योग्य सद्दर्शन है परन्तु जिनका दर्शन, तर्क, आगम, प्रत्यक्ष, अनुभव से विरुद्ध प्रतीत होता है उनका दर्शन ग्रहण योग्य नहीं है। कहा भी है-

पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु।

युक्तिमद्वचन यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः।। (1) (लोक. तत्त्वनि. 2 श्लोक 38)

हमारा महावीर से कोई राग नहीं है जिससे उनके पक्ष में आँख मूँदकर गिरा जाए और न कपिल से कोई द्वेष ही है। हमारा तो स्पष्ट विचार है कि जिसके वचन युक्ति युक्त हो उसी का अनुसरण करो।

सद्दर्शन प्रतिपादक के गुण

दोषाऽऽवरण योर्हानिर्निः शेषाऽस्त्यतिशायनात्।

क्वचिद्यथा स्वहेतुभ्यो बहिरन्तर्मलक्षयः।। (4) (देवागम स्तोत्र)

दोषों तथा दोषों के कारणों की कहीं-कहीं सातिशय हानि देखने में आती है- अनेक पुरुषों में अज्ञान तथा राग-द्वेष-काम-क्रोधादिक दोषों की एवं उनके कारणों की उत्तरोत्तर बहुत कमी पाई जाती है-और इसलिए किसी पुरुष-विशेष में विरोधी कारणों को पाकर उनका पूर्णतः अभाव होना उसी प्रकार संभव है जिस प्रकार कि (सुवर्णादिक में) मल विरोधी कारणों को पाकर बाह्य और अंतरंग मल का पूर्णतः क्षय हो जाता है- अर्थात् जिस प्रकार किट्टकालिमादि मल से बद्ध हुआ सुवर्ण अग्नि प्रयोगादि रूप योग्य साधनों को पाकर उस सारे बाहरी तथा भीतरी मल से विहीन हुआ अपने शुद्ध सुवर्ण रूप में परिणत हो जाता है, उसी प्रकार द्रव्य तथा भाव रूप कर्ममल से बद्ध हुआ भव्य जीव सम्यग्दर्शनादि योग्य साधनों के बल पर उस कर्ममल को पूर्ण रूप से दूर करके अपने शुद्धात्म रूप में परिणत हो जाता है। अतः किसी पुरुष-विशेष में दोषों तथा उनके कारणों की पूर्णतः हानि होना असंभव नहीं है। जिस पुरुष में दोषों तथा आवरणों की यह निःशेष हानि होती है वही पुरुष आप्त अथवा निर्दोष सर्वज्ञ एवं सद्दर्शन का प्रणेता सद्गुरु होता है।

मुक्ति मार्ग प्रतिपादक-परमात्मा का चिंतन

विमुक्ति मार्ग प्रतिपादको यो-यो जन्ममृत्यु व्यसनाद्यतीतः।

त्रिलोकी लोकी विकलोऽकलंकः-स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।। (15)

May that Lord of Lords be enshrined in my heart, who has exhibited, the path O! Salvation who has passed beyond birth and death (which proceed sin), who sees the worlds and is body less and faultless.

भावार्थ-जो विमुक्ति मार्ग के प्रतिपादन करने वाले हैं, जो जन्म-मृत्यु-दुःख से परे हैं, जो तीन लोकों को देखने वाले हैं, शरीर से रहित हैं, दोषों से रहित हैं वे देवाधिदेव मेरे हृदय में विद्यमान रहे।

प्राप्त शिक्षाएँ-भगवान् मुक्ति मार्ग के उपदेशक होते हैं, भौतिक शरीर (पौद्गलिक-जैविक-रासायनिक, हड्डी-माँस-रक्त, स्पर्श-रस-गंध-वर्ण-वजन) से रहित चेतनात्मक-अमूर्तिक स्वरूप वाला होने से जन्म-जरा-मृत्यु से रहित अमृत स्वरूप होते हैं, बिना

इन्द्रिय-मन-यंत्र के किन्तु अनंतज्ञान से संपूर्ण ब्रह्माण्ड को केवल साक्षी रूप में जानते हैं, संपूर्ण दोषों (पशु-मानव-स्वर्ग के देव-नारकी संबंधी संपूर्ण दोषों) से रहित होते हैं। ऐसे भगवान् के ध्यान से स्व में निहित आध्यात्मिक-शक्तियाँ/भगवत्-शक्तियाँ जागृत होती है।

संपूर्ण दोषों से मुक्त-परमात्मा का चिंतन

क्रोडीकृता शेष शरीरवर्गाः-रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः-स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।। (16)

May that Lord of Lords be enshrined in my heart, who is free from all passion like defects, which have encompassed all embodied-beings, who is wisdom personified, and is above all senses and Eternal.

भावार्थ-संपूर्ण शरीरधारी जीव अर्थात् कर्मबंध से युक्त संसारी जीव को आधीन करने वाले रागादिक दोष जिनके नहीं है, जो इन्द्रियों से रहित हैं, अपाय से रहित हैं, ज्ञानमय हैं, ऐसे महादेव मेरे हृदय में निवास करें।

प्राप्त शिक्षाएँ-दृश्यमान, ज्ञात जीवों में जो राग-द्वेषादि दोष हैं, उन दोषों का आरोप मोही-अज्ञानी-स्वार्थी-भयभीत जीव भगवान् में करता है जो यथार्थ से सत्य नहीं है। भगवान् भौतिक शरीर से रहित होने से शरीर जनित जन्म-मृत्यु-वृद्धत्व भी भगवान् में नहीं होता है। शरीराश्रित इन्द्रियाँ होने से भगवान् इन्द्रिय से रहित होने से इन्द्रियजन्य ज्ञान, भोग-उपभोग, दोष से रहित होते हैं। अतः भगवान् ब्रह्माण्ड के लिए, किसी भी जीव के लिए या स्वयं के लिए भी अपाय/हानिकारक नहीं होते हैं, किसी को भी कष्ट, दुःख, मृत्यु, नरक, शाप नहीं देते हैं, प्रलय-विध्वंस नहीं करते हैं।

विश्व व्यापक (विश्वज्ञ)-परमात्मा का चिंतन

यो व्यापको विश्वजनीन वृत्तेः-सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबंधः।
ध्यातो धुनीते सकलंविकारं-स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।। (17)

May the Lord of Lords be enshrined in my heart, who being the source of universal good, is all pervading, is perfect, is all knowing, has destroyed all bonds of karma (action) and by contemplating upon whom all evil is annihilated.

भावार्थ-जो विश्व के लिए कल्याणकारी हैं, सिद्ध हैं, प्रबुद्ध हैं, कर्म मल को

नाश करने वाले हैं, उनके ध्यान करने से संपूर्ण विकारों को नष्ट करते हैं, ऐसे देवों के देव हमारे हृदय में निवास करें।

प्राप्त शिक्षाएँ-जो भव्यात्मा स्वयं के संपूर्ण कर्म (द्रव्य कर्म, भाव कर्म, नोकर्म) को समग्रता से मूलतः नाश कर देता है तब वह शुद्ध होकर के सिद्ध, प्रवृद्ध होकर विश्व के लिए कल्याणकारी/आदर्श/पूजनीय बन जाता है। उनके ध्यान से भी ध्यानी के संपूर्ण विकार नष्ट हो जाते हैं, ध्याता के विकार नष्ट होने से, स्वयं शुद्ध, बुद्ध, निर्विकार होने से भगवान् विश्व मंगलमूर्ति हैं/मंगलदाता हैं।

निर्दोष परमात्मा के शरणाश्रित

न स्पृश्यते कर्मकलयदोषैः-यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः।
निरञ्जनं नित्यमनेक मेकं-तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।। (18)

I seek shelter in that Supreme Lord who cannot be touched by the contamination of karmic filth just as volumes of darkness cannot effect the strong-rayed sun and who is stainless, eternal, one and many.

भावार्थ-यथा घनान्धकार के समूह से भी सूर्य अस्पृश्य है, वैसे ही जो कर्मकलंक रूपी दोषों से अस्पृश्य है, जो निरञ्जन है, नित्य है, अनेक है, एक है, उस आप्त देव (प्रामाणिक, सर्वज्ञ, सत्य-हितोपदेशी देव) की शरण को प्राप्त करता हूँ।

प्राप्त शिक्षाएँ-यथा जो स्वयं तैर सकता है वह दूसरों को भी तार सकता है, जो दीपक स्वयं प्रकाशी है वह दूसरों को भी प्रकाशित कर सकता है तथा ही जो स्वयं ही समर्थ/शक्ति सम्पन्न है वह दूसरों की रक्षा कर सकता है। ऐसा जो देवेश्वर निष्कलंक, समर्थ, प्रामाणिक, अनंत गुण-पर्यायों से युक्त होने से एकानेक स्वरूप हैं वे ही शरण के योग्य हैं/तारणहार हैं/उद्धारक हैं। अतएव जो मंगल हैं, वे ही उत्तम हैं और वे ही शरणभूत है। अतः चत्तारि मंगलम्, चत्तारि लोगुत्तमा, चत्तारि शरणं पव्वज्जामि अर्थात् जो चार मंगल हैं वही उत्तम तथा वही शरणभूत (आश्रयदाता) हैं।

ज्ञान-ज्योति-परमात्मा के शरणाश्रित

विभासते यत्र मरीचिमाली-न विद्यमाने भुवनावभासि।
स्वात्मस्थितं बोधमय प्रकाशं-तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।। (19)

I seek shelter in that Supreme Lord, who centered in his own self, diffuses the light of wisdom and illumines the universe

in a manner that such cannot.

भावार्थ–मैं उस परमदेव के आश्रय को प्राप्त करता हूँ जो स्वात्मस्थित, ज्ञानमय ज्योति से भुवन (लोक) को प्रकाशित करते हैं, जिसे सूर्य भी प्रकाशित नहीं कर सकता है।

प्राप्त शिक्षाएँ–परम अनंत आध्यात्मिक ज्ञान ज्योति स्वरूप भगवान् स्वात्मा में ही लीन होकर संपूर्ण ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करते हैं जिसे करोड़ों-अरबों सूर्य भी नहीं कर सकते हैं।

तज्जयति परं ज्योतिः समं समस्तैरनन्तपर्यायैः।

दर्पणतल इव सकला प्रतिफलति पदार्थमालिकयत्र।। (1) पु.सि.

Victory to that supreme light, where as it were in a mirror, is reflested the chain of all substances in all their infinite conditions.

वह प्रसिद्ध परम ज्योति जयवंत हो। लोक-अलोक को प्रकाशित करने वाली लोक के लोचन स्वरूप अत्यंत उत्कृष्ट निर्मल ज्योति होने के कारण केवलज्ञान ही परम ज्योति है। यह परम ज्योति ज्ञानमूर्ति है। यह ज्ञानात्मक परम ज्योति अष्ट कर्म से रहित होने के कारण तथा सम्यक्त्वादि अष्ट गुणों से युक्त होने के कारण श्रेष्ठ है, निर्मल है, चैतन्य स्वरूप है। जयति अर्थात् सबसे उत्कृष्ट रूप में प्रवर्तन होती है।

जिसमें आत्मा समस्त ज्ञान, सुख, वीर्य, सिद्धत्व, निरोगत्व, अक्षय अव्याबाधत्व आदि गुण सादि अनंत, अनादि अनंत पर्यायों के साथ पदार्थों की मालिका/शृंखला नव पदार्थों की परंपरा सम्यक् रूप में युगपत्/एक साथ समग्रता रूप में प्रतिफलित/प्रतिबिंबित होती है। जिस प्रकार आदर्श/दर्पण में योग्य द्रव्य-क्षेत्र में रहते हुए रूपी द्रव्य अर्थात् भौतिक वस्तु प्रतिबिंबित होती है, उसी प्रकार अष्ट कर्मों से रहित अचिन्त्य सामर्थ्य से युक्त परम ज्योति में/परम ब्रह्म में त्रिकालवर्ती संपूर्ण वस्तु समूह हस्तरेखा के समान प्रकाशमान होती हैं।

संपुण्णं तु समग्गं, केवलमसवत्त सव्वभावगयं।

लोयालोयवितिमरं, केवलणाणं मुणेदव्वं।। (460) गो.जी.214

यह केवलज्ञान, संपूर्ण, केवल, प्रतिपक्ष रहित, सर्व पदार्थगत और यह ज्ञान समस्त पदार्थों को विषय करने वाला है और लोकालोक के विषय में आवरण रहित है तथा जीव द्रव्य के जितने अंश हैं वे यहाँ पर संपूर्ण व्यक्त हो गए हैं। इसलिए

उसको (केवलज्ञान को) संपूर्ण कहते हैं। मोहनीय और वीर्यांतराय का सर्वथा क्षय हो जाने के कारण वह अप्रतिहत शक्ति युक्त है और निश्चल है अतएव उसको समग्र कहते हैं। इन्द्रियों की सहायता की अपेक्षा नहीं रखता इसलिए केवल कहते हैं। चारों घातिकर्मों के सर्वथा क्षय से उत्पन्न होने के कारण वह क्रमकरण और व्यवधान से रहित है, फलतः युगपत् और समस्त पदार्थों को ग्रहण करने में उसका कोई बाधक नहीं है, इसलिए उसको असपक्ष (प्रतिपक्ष रहित) कहते हैं।

असहायं स्वरूपोत्थं निरावरणमक्रमम्।

घातिकर्मक्षयोत्पन्नं केवलं सर्वभावगम्।। (30) त.सा.पू.15

जो किसी बाह्य पदार्थ की सहायता से रहित हो, आत्मस्वरूप से उत्पन्न हो, आवरण से रहित हो, क्रमरहित हो, घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न हुआ हो तथा समस्त पदार्थों को जानने वाला हो, उसे केवलज्ञान कहते हैं।

आदा णाणपमाणं णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं।

णेयं लोयालोयं तम्हा णाणं तु सव्वगदं।। (23)

जैसे सूर्य या दीपक का एक निश्चित आकार होता है परन्तु उसका प्रकाश उस निश्चित आकार से भी अधिक फैलता है, प्रकाश फैलने पर भी सूर्य या दीपक फैलता नहीं है, परन्तु जहाँ तक उसका प्रकाश फैलता है उसका उतना क्षेत्र माना जाता है। जैसे एक चुंबक और उसका चुंबकीय क्षेत्र अलग-अलग होता है, चुंबक का आकार छोटा और उसका चुंबकीय क्षेत्र उसके आकार को घेरता हुआ बड़ा होता है। इसी प्रकार केवलज्ञानी के आत्मप्रदेश असंख्यात होते हुए भी उनका आकार अंतिम शरीर के आकार के समान है। सिद्ध भगवान् का तो आकार अंतिम शरीर से भी कुछ कम है। कुछ केवली भगवान् मोक्ष के पहले चार प्रकार के समुद्घात करते हैं। उसे केवली समुद्घात कहते हैं। अंतिम केवली समुद्घात में उनके आत्मप्रदेश संपूर्ण 343 घन राजू प्रमाण लोकाकाश में व्याप्त हो जाते हैं। अन्य समय में उनके आत्मप्रदेश संसारावस्था में स्वदेह प्रमाण भी रहते हैं और सिद्धावस्था में चरम शरीर से किञ्चित् न्यून आकार में रहते हैं। परन्तु सर्वज्ञ भगवान् हर अवस्था में संपूर्ण लोकालोक को जानते हैं। इस कारण ज्ञानक्षेत्र/ज्ञेयक्षेत्र की अवस्था सर्वगत है किन्तु जो लोग भगवान् को शरीर की अपेक्षा भी सर्वगत मानते हैं वे सत्य-तथ्य से परे हैं। यदि भगवान् सर्वगत होते तो मल त्याग आदि अयोग्य क्रिया भी भगवान् के शरीर में ही होती

जिससे भगवान् को ही अपवित्र कर देते और कष्ट देते। जैसे सूर्य के प्रकाश क्षेत्र में कोई कार्य करने पर वह सूर्य में नहीं होता वैसे भगवान् के ज्ञान क्षेत्र में ये क्रियाएँ होती हैं इसलिए भगवान् के शरीर में ये क्रियाएँ नहीं होती हैं। परमात्म प्रकाश में भी योगेन्द्र देव ने ज्ञान, ज्ञान विषय, ज्ञान क्षेत्र का वर्णन निम्न प्रकार किया है।

जसु अब्भंतरि जगुवसइ जग-अब्भंतरि जो जि।
जगि जि वसंतु वि जगु जि ण वि मुणि परमप्पउ सो जि।।

जिस आत्माराम के केवलज्ञान में संसार बस रहा है, अर्थात् प्रतिबिंबित हो रहा है, प्रत्यक्ष भास रहा है और जगत् में वह बस रहा है अर्थात् सब में व्याप्त हो रहा है-वह ज्ञाता है और जगत् ज्ञेय है, संसार में निवास करता हुआ भी निश्चयनय कर किसी जगत् की वस्तु से तन्मय नहीं होता अर्थात् जैसे रूपी पदार्थ को नेत्र देखते हैं, तो भी उनसे अलग ही रहते हैं, इस तरह वह भी सबसे अलग रहता है, उसी को परमात्मा जानो।

कर्म सिद्धांत-आध्यात्म-अलौकिक गणित-संबंधी शोधपूर्ण कविता

(सुख संबंधी शोध-बोध व समीक्षा)

अनंत तृप्ति मिले तो कैसे!?

(सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि भोग-उपभोग से ही क्यों नहीं मिलती है तृप्ति!?)

(चाल : आत्म शक्ति.....)

क्षुद्र जीव से स्वर्ग के देव तक क्यों होते हैं अतृप्त!?
धनी-गरीब राजा-महाराजा तक सभी होते हैं अतृप्त!? (1)
इसका अनुसंधान मैं कर रहा हूँ आगम सम्मत।
देश-विदेशों के इतिहास-पुराणों में जो मैं पढ़ा अभी तक।। (2)
देश-विदेशों में वर्तमान में जो कुछ घटित हो रहा है।
देख-सुनकर व पढ़कर अनुभव मैं जो कुछ कर रहा हूँ।। (3)
अधिक अतृप्त तो (प्रायः) अधिक सत्ता-संपत्ति वाले होते हैं।
प्रसिद्धि-डिग्री नगर वाले, अधिक अतृप्त होते हैं।। (4)
इसके प्रमुख कारण है आत्म-स्वभाव कर्म विकार में अंतर।

बाह्य कारण/(गौण) है प्रतिफल द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव व व्यवहार।। (5)

अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्य व, अस्तित्व-वस्तुत्व-प्रमेयत्व।
प्रभुत्व-विभुत्व आदि अनंत गुण होते हैं (हर जीव के) आत्म स्वभाव।। (6)

अनादि काल से अनंत कर्मबंध से संसारी जीव के उक्त सभी गुण।
सुप्त-गुप्त व बंधन युक्त होकर हुए हैं विकृत व क्षीण।। (7)

जिससे संसारी जीव हुए हैं राग-द्वेष-मोह काम-क्रोधादि युक्त।
स्व-अनंत-वैभव के अभाव से होते हैं सदा अतृप्त।। (8)

स्व-स्वभाव को प्राप्त करना होता है हर द्रव्य की प्रवृत्ति/प्रकृति/संस्कृति।
यथा जल वाष्प, हिम का तरल-जल होने की प्रवृत्ति।। (9)

अनंत वैभवशाली हर जीव होने से उसे प्राप्त हेतु करता प्रयत्न।
(किन्तु) राग-द्वेष-मोहात्मक प्रयत्न से नहीं प्राप्त होता वैभव अनंत।। (10)

संख्यात-असंख्यात होती संसारी जीव की उपलब्धि अधिक से अधिक उपलब्धियाँ।
स्व-अनंत उपलब्धियों के अभाव से, अतृप्तकर ये (संसार की) उपलब्धियाँ।। (11)

राग-द्वेष-मोहादि ही यथार्थ भावकर्म जिससे बंधते हैं द्रव्यकर्म।
जिसके कारण जीव परतंत्र होकर करता संसार में परिभ्रमण।। (12)

भावकर्म से द्रव्य कर्म बंधता, द्रव्य कर्मोदय से होता भावकर्म।
ऐसी क्रिया-प्रतिक्रिया रूपी चैनरियेक्शन से होता है संसार भ्रमण।। (13)

द्रव्य कर्म नाश के हेतु भावकर्म, नाश करना है अनिवार्य।
जितने अंश में कर्म नाश होंगे, उतने अंश में मिलेगा सुख।। (14)

पूर्ण नाश से अनंत सुख मिलेगा, जीव बनेगा शुद्ध-बुद्ध।
इसे ही प्राप्त करने हेतु 'कनकनन्दी' कर रहा है पूर्ण प्रयत्न।। (15)

सीपुर, दिनांक 22.10.2016, रात्रि 8.20

संदर्भ-

इन्द्रिय सुख को भोगने का कारण

मणुयसुरामरिदा अहिद्दुदा इंदियेहिं सहजेहिं।
असहंता तं दुक्खं रमंति विसएसु रम्मेसु।। (63)

मनुष्यादि जीव अमूर्त अतीन्द्रिय ज्ञान तथा सुख के आस्वादन को नहीं अनुभव करते हुए मूर्तिक इन्द्रिय जनित ज्ञान तथा सुख के निमित्त पाँचों इन्द्रियों के भोगों में प्रीति करते हैं उसमें जैसे गर्म लोहे का गोला चारों तरफ से पानी खींच लेता है उसी तरह पुनः-पुनः विषयों में तीव्र तृष्णा पैदा होती है। उस तृष्णा को न सह सकते हुए वे विषय भोगों का स्वाद लेते हैं, इसलिए ऐसा जाना जाता है कि पाँचों इन्द्रियों की तृष्णा रोग के समान है तथा उसका उपाय विषय भोग करना यह औषधि के समान हैं इसलिए संसारी जीवों को वास्तविक सच्चे सुख का लाभ नहीं होता है।

समीक्षा-प्रत्येक जीव का स्वाभाविक स्वरूप सुख स्वरूप है, इसलिए प्रत्येक जीव सुख चाहता है, परन्तु अनादिकाल की परतंत्रता के कारण संसारी जीव सहज आत्मिक सुख को प्राप्त करने में असमर्थ है। उस कर्म परतंत्रता के कारण शारीरिक, मानसिक एवं इन्द्रियजनित दुःख होते हैं। उन दुःखों से पीड़ित होकर सुख की इच्छा से मोह से मोहित होकर इन्द्रियजनित सुख का भोग करते हैं। बिना दुःख कोई इन्द्रियजनित सुख को नहीं चाह सकता है। जिस प्रकार प्यासा व्यक्ति पानी को चाहता है, भूखा व्यक्ति भोजन चाहता है, सर्दी से पीड़ित व्यक्ति उष्ण वस्तु को चाहता है, रोग से संतप्त व्यक्ति औषधि को चाहता है, खुजली रोग से पीड़ित व्यक्ति खुजालता है उसी प्रकार संसारी जीव विभिन्न दुःखों से पीड़ित होकर उसकी तात्कालिक निवृत्ति के लिए इन्द्रियजनित सुख चाहता है परन्तु जिस प्रकार प्यासादि से रहित व्यक्ति पानी आदि को नहीं चाहता है उसी प्रकार इन्द्रियजनित दुःखों के बिना इन्द्रियजनित सुखों को नहीं चाह सकता है। यह क्रम स्वर्ग के देवों से स्पष्ट प्रतिभासित हो जाता है क्योंकि नीचे-नीचे स्वर्ग के देव इन्द्रियजनित दुःख से अधिक पीड़ित होने के कारण अधिक-अधिक भोग सेवन करते हैं और उत्तरोत्तर (ऊपर-ऊपर) के देव इन्द्रियजनित दुःख से कम पीड़ित होने के कारण इन्द्रियजनित सुख भोग कम सेवन करते हैं। जैसे सर्वार्थसिद्धि आदि के कुछ विशिष्ट देव प्रवीचार (मैथुन) ही नहीं करते हैं, क्योंकि उन्हें वेद कर्मजनित विशेष पीड़ा का अभाव है। गुणस्थान की अपेक्षा भी पहले-पहले गुणस्थानों में इन्द्रियजनित पीड़ा अधिक है और उत्तरोत्तर इन्द्रियजनित पीड़ा कम होती जाती है। जीव इन्द्रियजनित भोगों को क्यों भोगना चाहता है इसका आगमोक्त अनुभवपरक सुंदर वर्णन महाप्रज्ञ पं. आशाधर जी ने किया है-

अनाद्यविद्यादोषोत्थचतुः संज्ञाज्वरातुराः।

शश्वत्स्वज्ञानविमुखा सागारा विषयोन्मुखाः।। (2) सा.धर्मा. पृ.2

अनादिकालीन अविद्या रूपी दोष से उत्पन्न हुई चार संज्ञी रूपी ज्वर से पीड़ित, सदा आत्मज्ञान से विमुख और विषयों में उन्मुख गृहस्थ होते हैं।

अनाद्यविद्यानुस्यूता ग्रंथसंज्ञामपासितुम्।

अपारयन्तः सागाराः प्रायो विषयमूर्च्छिताः।। (3)

अनादि अविद्या के साथ बीज और अंकुर की तरह परंपरा से चली आ रही परिग्रह संज्ञा को छोड़ने में असमर्थ और प्रायः विषयों में उन्मुख गृहस्थ होते हैं।

ज्ञानीसङ्गतपोध्यानैरप्यसाध्यो रिपुः स्मरः।

देहात्मभेदज्ञानोत्थवैराग्येणैव साध्यते।। (32) पृ.340

आत्मदर्शी ज्ञानी पुरुषों की संगति, तप और ध्यान से भी वश में न आने वाला यह शत्रु कामदेव शरीर और आत्मा के भेदज्ञान से उत्पन्न वैराग्य से ही वश में आता है।

धन्यास्ते येऽत्यजन् राज्ये भेदज्ञानाय तादृशम्।

धिङ्मादृशकलत्रेच्छातंत्रगार्हस्थ्यदुः स्थितान्।। (33)

भरत चक्रवर्ती आदि जिन पुरुषों ने भेदज्ञान के लिए ऐसे विशाल राज्य को छोड़ दिया, वे धन्य हैं। जिसमें स्त्री की इच्छा का ही प्राधान्य है उस गृहस्थाश्रम में दुःख पूर्ण जीवन बिताने वाले हमारे जैसे विषयी लोगों को धिक्कार है।

इतः शमश्री स्त्रीचेतः कर्षतो मां जयेन्नु का।

आ ज्ञातमुत्तरैवात्र जेत्री या मोहराट्चमूः।। (34)

इस ओर से प्रशम सुख रूप लक्ष्मी और दूसरे ओर से स्त्री मेरे चित्त को आकृष्ट करती है। इनमें से किसकी जीत होगी? अथवा मुझे निश्चय हो गया है कि इन दोनों में से स्त्री ही जीतेगी, जो मोह राजा की सेना है।

चित्रं पाणिगृहीतीयं कथं मां विष्वगाविशत्।

यत्पृथग्भावितात्माऽपि, समवैम्यन्या पुनः।। (35)

आश्चर्य है कि यह पाणिगृहीती अर्थात् मैंने पाणिग्रहण किया है कैसे मुझमें चारों ओर से घुस गयी। क्योंकि मैं भिन्न हूँ और यह मुझसे भिन्न है इस प्रकार तत्त्व-ज्ञान से बारंबार विचार करने पर भी मैं फिर उसके साथ अपने को एकमेक कर लेता हूँ।

स्त्रीश्चित्त निवृत्तं चेन्नु वित्तं किमीहसे।

मृतमण्डनकल्पो हि स्त्रीनिरीहे धनग्रहः।। (36)

हे चित्त! यदि तुम विवेक के बल से स्त्री से निवृत्त हो तो फिर धन की इच्छा क्यों करते हो? क्योंकि स्त्री के प्रति निस्पृह होने पर धन का अर्जन रक्षण आदि ऐसा ही है जैसे मुर्दे को सजाना।

जहाँ तक इन्द्रिय सुख है वहाँ तक दुःख है

जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुःक्खं वियाण सब्भावं।
जदि तं ण हि सब्भावं वावारो णत्थि विसयत्थं।। (64)

जिनका हत (निकृष्ट-निंद्य) इन्द्रियाँ जीवित अवस्था में हैं उनके उपाधि के कारण से होने वाला (बाह्य संयोग के कारण से होने वाला औपाधिक) दुःख न भी हो तो स्वाभाविक दुःख है ही, क्योंकि (उनकी) विषयों में रति देखी जाती है। हाथी के हथिनी रूपी कुट्टनी के शरीर स्पर्श की तरह, मछली के बंशी में फँसे हुए माँस के स्वाद की तरह, भ्रमर बंद होने से सन्मुख कमल की गंध की तरह, पतंग के दीपक के ज्योति की रूप की तरह और हिरन के शिकारी के स्वर की तरह दुर्निवार इन्द्रिय वेदना के वशीभूत होते हुए उनके (अर्थात् जिनके इन्द्रियाँ जीवित हैं उनके) अत्यंत नाशवाले (क्षणिक) विषयों में भी पतन देखा जाता है। 'उनका दुःख स्वाभाविक है' यदि ऐसा स्वीकार नहीं किया जाय तो, जिसका शीत-ज्वर उपशांत हो गया उनके पसेव (पसीना) की तरह जिसका दाह-ज्वर उतर गया है उसके कांजी के परिषेक की तरह, जिसकी आँखों का दुःख दूर हो गया है उसके बट चूर्ण (शंख इत्यादि का चूर्ण) आंजने की तरह जिसका कान दर्द नष्ट हो गया है उसको बकरे का मूत्र कान में डालने की तरह और जिसका घाव पूरा भर गया है उसको फिर लेप करने की तरह (अर्थात् जिसका रोग शमन हो गया है उस रोग के प्रतिकार या इलाज के लिए औषधि आदि सेवन नहीं देखा जाता है उसी प्रकार उन जीवित इन्द्रिय वालों के यदि वांछारूपी रोग न होता तो उनके भी) विषय व्यापार न देखा जाता, (किन्तु) वह (विषय-व्यापार) देखा जाता है। इससे (सिद्ध हुआ कि) जिनके इन्द्रियाँ जीवित हैं ऐसे परोक्ष ज्ञानी स्वभावभूत दुःख वाले (स्वाभाविक दुःखी ही) हैं।

समीक्षा–कारण के बिना कार्य नहीं होता और जहाँ कार्य है वहाँ अवश्य कारण होगा ही। जिस प्रकार जहाँ अग्निजनित धुआँ है वहाँ अग्नि अवश्य होगी क्योंकि अग्नि के बिना धुआँ होना असंभव है इसी प्रकार जहाँ विषय संबंधी राग है, भोग है,

वहाँ उस विषय संबंधी दुःख अवश्य ही होगा। जिस प्रकार एक व्यक्ति रुचिपूर्वक भोजन कर रहा है तो वह व्यक्ति शारीरिक रूप से भूखा या मानसिक रूप से भूखा होगा। इसी प्रकार कोई औषधि सेवन करता है तो वह किसी न किसी रोग से ग्रसित होगा। क्योंकि जीवों की प्रवृत्ति आवश्यकतानुसार होती है, अनावश्यक नहीं होती है। जिस प्रकार जिसके लिए धन की आवश्यकता होती है वह धन उपार्जन करता है परन्तु जिसको धन की आवश्यकता नहीं है वह ना धन संचय करता है न उत्पादन करते हैं जैसे-निस्पृही (दिगम्बर संत)। परन्तु अज्ञानी, मोही, रागी जीव उस दुःख को ही सुख मान बैठता है एवं उसमें ही रमण करता है। कहा भी है-

न तदस्तीन्द्रियार्थेषु यत्क्षेमङ्करमात्मनः।

तथापि रमतेबालस्तत्रैवाज्ञानभावनात्।। (55) (समाधितंत्र पृ.नं.64)

तत्त्वदृष्टि से यदि विचार किया जाय तो ये पाँचों ही इन्द्रियों के विषय क्षणभंगुर पराधीन हैं, विषम हैं, बंध के कारण हैं, दुःख स्वरूप हैं और बाधा सहित हैं-कोई भी इनमें आत्मा के लिए सुखकर नहीं फिर भी यह अज्ञानी जीव उन्हीं से प्रीति करता है, उन्हीं की सम्प्राप्ति में लगा रहता है और रात-दिन उन्हीं का राग अलापता है। यह सब अज्ञान भाव को उत्पन्न करने वाले मिथ्यात्व-संस्कार का ही माहात्म्य है।

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारेस्त्रिभिर्नरः।

आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम्।। (22) पृ.149

हे कौंतेय! इस त्रिविध नरक द्वार से दूर रहने वाला मनुष्य आत्मा के कल्याण का आचरण करता है और इससे परम गति को पाता है।

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।

आद्यन्तपन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुध।। (22) (गीता पृ.68)

विषय-जनित भोग अवश्य दुःखों के कारण हैं। हे कौंतेय! वे आदि और अंत वाले हैं। बुद्धिमान मनुष्य उसमें नहीं फँसता।

आरंभेतापकान्प्राप्तावतृप्तिप्रतिपादकान्।

अंते सुदुस्त्यजान् कामान् कामं कःसेवते सुधीः।। (17) (इष्टो. पृ.148)

भोग आरंभ में-उत्पत्ति के समय अनेक संताप देते हैं-शरीर इन्द्रिय और मन को क्लेश के कारण हैं-और अनादि भोग्य द्रव्य के संपादन करने में भी कृष्यादि कारणों से अत्यंत दुःख होता है और जब वे प्राप्त हो जाते हैं तब उनके भोगने में

तृप्ति नहीं होती पुनः-पुनः भोगने की इच्छा बनी रहती है और चित्त में व्यग्रता तथा घबराहट होती रहती है। इसलिये अतृप्तिवश अनंतकाल में भी भोगों को छोड़ने का साहस नहीं होता। ऐसे अहितकर भोगों को कौन विद्वान् सेवन करेगा-कोई बुद्धिमान नहीं करेगा।

मनोवैज्ञानिक विश्लेषण-आध्यात्मिक विश्लेषण युक्त कविता

पश्चात्ताप-प्रायश्चित्त से कर्मनाश करूँ!?

(प्रतिक्रमण-आलोचना-आत्मविश्लेषण-प्रत्याख्यान का स्वरूप व फल)

(चाल : ज्योति कलश छलके....., नीले गगन के तले.....)

धन्य स्व-पश्चात्तापऽऽऽ धन्य स्व-प्रायश्चित्तऽऽऽ
मेरे दोषों का स्मरण करूँऽऽऽ निन्दा-गर्हा से दूर करूँऽऽऽ...(ध्रुव)...

आगम-अनुभव से मैं जाना...अनादिकाल से पाप (मैं) कीना...
मन-वचन-काय से...राग-द्वेष-मोह (भाव) से...धन्य...(1)...

चौरासी लक्ष योनि मध्ये...पञ्च परिवर्तन चतुर्गति में...
पञ्च पाप सप्त व्यसनों से...अनंतानंत पाप किया मैं...
अनंत दुःख सहे...2...धन्य...(2)...

आत्म स्वभाव से विपरीत किया...देव-शास्त्र-गुरु को न माना...
दीन हीन अहंकारी बना...रत्नत्रय से विपरीत माना...
कुमार्गी बनके...2...धन्य...(3)...

ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा कीना...स्व-पर को मैं दुःख दीना...
सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि हेतु...भोगोपभोग हेतु पाप कीना...
भव-भव भ्रमण किया...2...धन्य...(4)...

दुष्ट चिंतन व कथन से...अप्रयोजन भूत काम करने से...
खाना-पीना-सोना-चलने से...किया हूँ पाप पर निन्दा से...
भाव हिंसक बनके...2...धन्य...(5)...

सत्य-तथ्य व आत्मज्ञान से...श्रद्धा-प्रज्ञा व अनुभव से...
हित-अहित जान रहा हूँ...अहित त्याग हेतु पश्चात्ताप...

प्रायश्चित्त करके...2...धन्य...(6)...

अंतःकरण से (मैं) स्व-निन्दा करूँ...गुरु समक्ष गर्हा भी करूँ...
अंतःकरण से जल रहा हूँ...(पूर्व) पाप कर्मों को जला रहा हूँ...

प्रतिक्रमण करके...2...धन्य...(7)...

स्व-पर सहानुभूति कर रहा हूँ...अन्य प्रति समानुभूति कर रहा हूँ...
पर दुःख कातर मैं बन रहा हूँ...मैत्री प्रमोद कारुण्य साम्य भा रहा हूँ...

अनुप्रेक्षा करके...2...धन्य...(8)...

हर जीव से क्षमा माँगता हूँ...अक्षमा भाव नहीं रखता हूँ...
पूर्वकृत पाप सभी त्यागता हूँ...भावी पाप को त्याग करता हूँ...

प्रत्याख्यान करके...2...धन्य...(9)...

पाप-ताप-संताप-तनाव...त्याग से मैं बन रहा हूँ पावन...
एकाग्रचित्त से करूँ ध्यान-अध्ययन...समता-शांति से आत्मकल्याण...

पवित्र भाव से...2...धन्य...(10)...

अशुभ त्यागकर शुभ करता हूँ...आत्मविशुद्धि बढ़ा रहा हूँ...
कर्मनाश से मोक्ष चाहता हूँ...'कनक' शुद्ध-बुद्ध होना चाहता हूँ...

स्वभाव में आके...2...धन्य...(11)...

सीपुर, दिनांक 24.10.2016, रात्रि 8.37

संदर्भ-

प्रतिज्ञा सूत्र

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं, मुनि बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम्।। (1) (प्रतिक्रमण)

भावार्थ-जिस प्रतिक्रमण से, जीव के द्वारा प्रमाद से उत्पन्न होने वाले अनेक दोष क्षय को प्राप्त होते है तथा अनेक भवों में उपार्जित कर्मों का क्षण-मात्र में नाश होता है। इसलिये मुनियों को संबोधन के लिए, मैं ऐसे मल रहित निर्मल प्रतिक्रमण को

कहूँगा। (यह प्रतिक्रमण के रचयिता श्री गौतम स्वामी का प्रतिज्ञा सूत्र है।)

''भूतकालीन दोषों का निराकरण करना प्रतिक्रमण है।'' भावीकालीन दोषों का निराकरण करना प्रत्याख्यान है।

उद्देश्य सूत्र

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना-लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्-निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र! भवतः श्री-पाद-मूलेऽधुना,
निंदा-पूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे।। (2)

भावार्थ-हे तीन लोक के अधिपति जिनेन्द्रदेव! मुझ पापी, दुष्ट, अज्ञानी, मायाचारी, लोभी के द्वारा राग-द्वेष रूपी मल से मलीन मन के द्वारा जिन पाप-कर्मों का उपार्जन किया गया है, उन पाप कर्मों को मैं अनंत चतुष्टय रूप लक्ष्मी से सम्पन्न आपके चरण-कमलों में निंदापूर्वक छोड़ता हूँ तथा अब इस समय निरंतर सन्मार्ग में प्रवृत्ति करने की इच्छा करता हूँ। (जिनेन्द्र की साक्षीपूर्वक पाप-कर्मों का त्याग करता हूँ। इस प्रकार यह संकल्प सूत्र है।)

संकल्प सूत्र

खम्मामि सव्व-जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि।। (3)

भावार्थ-मैं संसार के समस्त प्राणियों के प्रति क्षमा भाव धारण करता हूँ। समस्त प्राणी भी मुझ पर क्षमा भाव धारण करें। संसार के सभी जीवों में मेरा मैत्री भाव है तथा किसी भी जीव के साथ मेरा वैर-विरोध नहीं हैं।

राग परित्याग सूत्र

राग-बंध-पदोसं च हरिसं दीण-भावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदि-मरदिं च वोस्सरे।। (4)

भावार्थ-हे जिनेन्द्र! मैं आपकी साक्षीपूर्वक राग-द्वेष-बंध, हर्ष, दैन्य प्रवृत्ति/भावना, पञ्चेन्द्रिय विषयों की वासना का आकर्षण, लोलुपता, आसक्ति, भय, शोक, रति और अरति का त्याग करता हूँ।

पश्चात्ताप सूत्र

हा! दुट्ठ-कयं हा! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा!

दुट्ठं अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेदंतो।। (5)

भावार्थ-1. हाँ! यदि मैंने काय से कोई दुष्ट कार्य किया हो। 2. हाँ! यदि मैंने मन से कोई दुष्ट चिन्तन किया हो और 3. हाँ! यदि मैंने कोई दुष्ट वचन बोला हो तो मैं उन मन-वचन-काय की दुष्ट क्रियाओं को दुष्कृत-अशुभ समझता हुआ, पश्चात्ताप से भीतर ही भीतर पीड़ित हुआ जल रहा हूँ अर्थात् अपने दुष्कृत्यों से मेरा अन्तःकरण जल रहा है अतः हे जिनेन्द्र! आपकी साक्षीपूर्वक इनका त्याग करता हूँ।

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराह-सोहणयं।

णिंदण-गरहण-जुत्तोमण-वच-कायेण पडिक्कमणं।। (6)

भावार्थ-द्रव्य-आहार, शरीर आदि। **क्षेत्र**-वसतिका, मार्ग, जिनालय आदि। **काल**-पूर्वाह्न, मध्याह्न और अपराह्न आदि। **भाव**-संकल्प-विकल्प आदि।

मैं, द्रव्य-शरीर आदि, क्षेत्र-वसतिका, मार्ग आदि, काल-भूत-भावी, वर्तमान अथवा पूर्वाह्न और अपराह्न में किये गये अपने अपराधों की शुद्धि के लिए मन-वचन-काय से प्रतिक्रमण करता हूँ।

ए-इंदिया, बे-इंदिया, ते-इंदिया, चतुरिंदिया, पंचिंदिया, पुढविकाइया-आउ-काइया, तेउ-काइया, वाउ-काइया, वणप्फदि-काइया, तस-काइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

भावार्थ-हे जिनेन्द्रदेव! मैंने एकेन्द्रिय से पञ्चेन्द्रिय पर्यन्त किसी भी जीव को मारना, पीड़ा देना, एकदेश प्राणों का घात करना, विराधना करना आदि पाप-कार्यों को स्वयं किया हो, दूसरों से कराया हो अथवा करने वालों की अनुमोदना की हो तो मेरे पाप मिथ्या होवें।

अच्छी सोच

मानव को सहानुभूति नहीं, समानुभूति की आवश्यकता

-डॉ. आलोक टंडन

सहानुभूति में हम दूसरे के दुःख को पहचानकर उसे दूर करने के बारे में

सोचते हैं, लेकिन खुद दुःखी नहीं होते। इसमें दया करने से अपनी श्रेष्ठता का अहंकार पनपता है। समानुभूति यानी दूसरा जैसा महसूस कर रहा है, वैसा महसूस करना। इसमें संवेदना का व्यवहार नहीं, व्यवहार में संवेदना झलकती है। दोनों में संवेदना की गहराई का फर्क है।

अतिशय व्यक्तिवादिता से पीड़ित जिस हिंसक समाज में हम आज जी रहे हैं, वह आक्रामक स्पर्द्धा को बढ़ावा देकर व्यक्ति को व्यक्ति के खिलाफ टकराव की स्थिति में खड़ा कर देता है। हम ऐसे संवेदनहीन समूह में बदलते जा रहे हैं जहाँ हर 'दूसरा' हमारा प्रतिद्वंद्वी है, उसका सुख-दुःख हमें नहीं व्यापता। मानवीय संबंधों में बिखराव के पीछे तो यह है ही, राष्ट्रों के बीच टकराव के पीछे भी कुछ हद तक यह जिम्मेदार है।

समानुभूति का मतलब है, 'दूसरा जैसा महसूस कर रहा है, वैसा ही महसूस करना।' इसके लिए स्वयं को दूसरे के स्थान पर रखकर सोचना होता है। सहानुभूति में हम दूसरे के दुःख को पहचानकर उसकी मदद करने की सोचते हैं। हमारा स्वयं दुःखी होना जरूरी नहीं है। सहानुभूति में एक दूरी है, जबकि समानुभूति में स्वयं वही भाव महसूस करने के कारण बराबरी है। सहानुभूति में अक्सर दया करने से अपनी श्रेष्ठता का अहंकार पनपता है। सहानुभूति से आप किसी गरीब की मदद कर सकते हैं किन्तु जिसने अकेला बेटा खो दिया हो उसके सामने अपने बेटे की उपलब्धियों और वैभव की चर्चा न करना समानुभूति का उदाहरण है। इसके लिए हृदय की विशालता चाहिए, मुँह का बड़बोलापन नहीं। इसमें 'अन्य' का बोध तिरोहित हो जाता है और करुणा का जन्म होता है।

दूसरे की भावनाएँ समझने और बाँटने का मानवीय संबंधों को मधुर और स्थायी बनाए रखने में अपनी भूमिका से कौन इनकार कर सकता है। मित्रता की शुरुआत भी अक्सर इसी विश्वास के साथ होती है कि अगला व्यक्ति हमारी भावनाओं-विचारों को, बिना निर्णायक बने बाँट-समझ सकेगा। आध्यात्मिक गुरु या मनोविश्लेषक की सफलता का राज भी यही है कि साधक-बीमार को यह पूरा विश्वास हो जाता है कि गुरु या मनोविश्लेषक उसे पूरी तरह समझता है और उसके सामने दिल खोला जा सकता है। सामाजिक जीवन में भी जहाँ टकराव है, वहाँ भी बातचीत की सफलता की संभावना तभी ज्यादा होती है जब दोनों पक्ष एक-दूसरे के दृष्टिकोण को ठीक से

समझते हो और उसके प्रति संवेदनशील हों। महात्मा गाँधी और मार्टिन लूथर किंग का सत्याग्रह इसका अच्छा उदाहरण है। दलाई लामा इसके आधुनिक प्रवक्ता हैं।

समानुभूति के अभाव में लोग गलत फैसले लेते हैं जो उनको और आसपास के लोगों को हानि पहुँचाते हैं। अच्छी बात यह है कि समानुभूति को हम सीख भी सकते हैं और जीवन को अधिक प्रसन्न और कम जटिल बना सकते हैं। ध्यान से सुनने की आदत, दूसरे के भले की वास्तविक चिंता, लेकिन निर्णायक बनने से बचना और उनकी भावनाओं को औचित्य प्रदान करना आदि ऐसे तरीके हैं, जिससे हम समानुभूति विकसित कर सकते हैं। सच्ची मुस्कुराहट के साथ पूछा गया एक वाक्य, 'कहो, कैसा चल रहा है,' इसकी अच्छी शुरुआत हो सकती है। समानुभूति, सहनशीलता और सहानुभूति से आगे का उपक्रम है जहाँ संवेदना का व्यवहार नहीं, व्यवहार में संवेदना झलकती है। तभी तो कोई बुद्ध और गाँधी बनता है। संसार को करुणा, अहिंसा और प्रेम का प्रेरक संदेश दे पाता है। आइए, हम सब नरसी मेहता की तरह इसे अपने में जगाये, वैष्णव जन तो तेणने कहिए जे पीड़ परायी जाणे रे.....

प्रेम से बढ़ती है मित्रता-एकता-संवृद्धि

(चाल : ज्योत से ज्योत जलाते चलो.....)

प्रेम से प्रेम बढ़ाते चलो, प्रेम से मित्रता बढ़ाते चलो।
मैत्री से एकता बढ़ाते चलो, शांति-संवृद्धि बहाते चलो।। (1)

निःस्वार्थ भाव से होता है प्रेम, स्वार्थ से होता मोहबंधन।
सेवा-सहयोग-आत्मीयता से, प्रेम बढ़ता हैं क्षमा भाव से।। (2)

स्व-आत्मिक गुणों से भी प्रेम करना, अन्य के सद्गुणों को सराहना।
दोनों के गुणों को भी बढ़ाते जाना, नवकोटि से सहयोग भी करना।। (3)

भोजन देने से भोजन करने से, सुख-दुःख में सहभागी बनने से।
रोग-शोक-संताप दूर से, हित-मित-प्रिय-शांत वचन से।। (4)

स्वाध्याय-चर्चा-शंका समाधान से, प्रत्यक्ष-परोक्ष निंदा।
वैर-विरोध व ईर्ष्या त्याग से, ऊँच-नीच भेद-भाव त्याग से।। (5)

हित हेतु मार्गदर्शन करने से, छिन्द्रान्वेषण असुया/(मात्सर्य) त्याग से।

तनाव द्वंद्व दूर करने हेतु चर्चा सुझाव मनोरंजन से।। (6)

जाति-पंथ-मत-काला-गोरा, धनी गरीब साक्षरी-निरक्षरी।
वेश-भूषा क्षेत्र जाति-राजनीति, ग्राम नगर की संकीर्णता परे।। (7)

निर्मल उदार व सरल-सहजता से, भाव-व्यवहार हो निःस्वार्थ रूप से।
प्रेम-संगठन-सहयोग बढ़ते, भेद-भाव वैर-विरोध घटते।। (8)

शोषण-मिलावट ठगी-भ्रष्टाचार, निंदा-अपमान-कलह घटते।
आक्रमण-युद्ध-आतंकवाद होते, गुप्तचर पुलिस सैनिक न होते।। (9)

वकील न्यायाधीश कोर्ट न होते, अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग न होते।
धन-जन समय-साधन-उपकरण, उत्तम कार्य में ही प्रयोग होते।। (10)

इसी से विकास होता सभी क्षेत्र में, व्यक्ति से लेकर विश्व तक में।
अतः (सभी) महापुरुष प्रेम बढ़ाने हेतु, कथनी-करनी में प्रेरणा भी देते।। (11)

प्रेम में गर्भित है करुणा-सेवा, त्याग-संवेदना-मैत्री भावना।
वैश्विक कुटुम्ब उदार भाव-क्षमा, 'कनक' भाये विश्वमैत्री भावना।। (12)

सीपुर, दिनांक 23.10.2016, रात्रि 8.47

हरिणानपि वेगशालिनी ननु बध्नन्ति वने वनेचराः।
निजगेयगुणेन किं गुणः कुरूते कस्य न कार्यसाधनम्।। (475) स.कौ.

भील, वन में अपने संगति के गुण से वेगशाली हरिणों को भी बाँध लेते हैं यह ठीक ही हैं क्योंकि गुण किसकी कार्यसिद्धि नहीं करता? अर्थात् सभी की करता है।

ददाति प्रतिगृहनति गृह्यमाख्याति पृच्छति।
भुङ्क्ते भोजयते चेव षड्विधं प्रीतिलक्षणम्।। (481) स.कौ.

देता है, लेता है, गुप्त बात कहता है, पूछता है, भोजन करता है और भोजन कराता है यह छह प्रकार का प्रीति का लक्षण है।

स प्रहरः पापहरः सा घटिका सुकृतसारशतघटिका।
सा वेला सुखमेला यत्र त्वं दृश्यसे मित्र।। (482)

मित्र के आने पर कोई कहता है कि हे मित्र! जिसमें आप दिखायी देते हैं वह पहर पापों को हरने वाला है, वह घड़ी सैकड़ों पुण्यों से श्रेष्ठ उत्तम घड़ी है और वह वेला सुख को मिलाने वाली है।

भौतिक से आध्यात्मिक की ओर वैज्ञानिक शोध

(चाल : हे गुरुवर! धन्य हो तुम....., सायोनारा.....)

धन्य हे ! वैज्ञानिक धन्य हो तुम, कितना शोध करते हो।
भौतिक से प्रारंभ कर, आध्यात्म की ओर बढ़ रहे हो।। (स्थायी)

तुम्हारे अनेक भेद-प्रभेद हैं, भौतिक, रसायनिक, यंत्र विज्ञान।
जीव विज्ञान, मनोविज्ञान व स्वास्थ्य विज्ञान अंतरिक्ष विज्ञान/(विश्व विज्ञान)।।

भौतिक रसायन में स्थूल से, सूक्ष्म की ओर बढ़ रहे हो।
ठोस, तरल, गैस, अणु से लेकर, प्लाज्मा व क्वांटम में जा रहे हो।। (1)

इसी से परे भी 'डार्कमेटर' व, 'डार्क एनर्जी' को शोध रहे हो।
दृश्यमान मेटर तो पाँच प्रतिशत (5%), अदृश्य अवशेष मान रहे हो।।

इसे जानने हेतु माइक्रोस्कोप व टेलीस्कोप (आदि) यंत्र बना रहे हो।
शक्ति से शक्तिशाली रोबट कंप्यूटर, आदि यंत्र को बना रहे हो।। (2)

सूक्ष्म जीव विज्ञान से प्रारंभ कर, आधुनिक मनुष्य तक बढ़ रहे हो।
धरती से लेकर विश्व में अन्यत्र भी, जीवों को खोज रहे हो।।

एककोशिय जीव की शेल से लेकर, मानवों के मन को पढ़ रहे हो।
चेतन-अचेतन व अवचेतन मन, शोध-बोध भी कर रहे हो।। (3)

सुख-शांति-स्वास्थ्य-संवृद्धि का, शोध-बोध भी कर रहे हो।
इस हेतु दान दया सेवा परोपकार, योगासन ध्यान भी मान रहे हो।

जीनोम (D.N.A., R.N.A.) को इस हेतु प्रमुख, कारण रूप से मान रहे हो।
उत्तम भाव-व्यवहार को हर क्षेत्र में, श्रेष्ठ-ज्येष्ठ मान रहे हो।। (4)

उत्तम भाव-व्यवहार-सरल, सहज-क्षमा-नम्रता-मृदुता।
व्यापकता-उदारता-सत्यग्राहिता, मान रहे हो एकाग्रता।।

भौतिक तत्त्व परे कुछ, वैज्ञानिक जीव को मान रहे हैं चेतन।
अनादि अनंत, स्वयंभू, स्वयंपूर्ण, अमूर्तिक ज्ञानानंदमय।। (5)

सौर परिवार से (लेकर) विश्व का, आयु-स्वरूप-आकार खोज रहे थे।
पहले से भी उत्तरोत्तर आयु आदि को, अधिक से अधिक मान रहे हो।।

पूर्व भ्रांत धारणा को त्यागते हुए, शोध-बोध व प्रयोग से।
सनम्र-सत्यग्राही उदार भाव से, सत्य को जान रह हो शीघ्रता से।। (6)

हर जीव की सुरक्षा हेतु व, पर्यावरण सुरक्षा के कारण भी।
संपूर्ण पृथ्वी की सुरक्षा हेतु, कर रहे हो शोध-बोध-प्रयोग भी।।

संपूर्ण संकीर्ण जाति-पंथ-मत व, भाषा, राष्ट्र, राजनीति परे।
सर्वहित हेतु प्रयासरत हो, भेदभाव धनी-गरीब से परे।। (7)

तुम जिज्ञासु बालक सम स्व-अज्ञानता को दूर कर रहे हो।
अतः तेरा विकास हो रहा (है) सत्कर्म हेतु आशीष 'कनक' का है।।

भौतिक-बौद्धिक-कल्पना-संवेदना को श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर मान रहे हो।
शोषण संघर्ष से परे सुरक्षा, समन्वय को श्रेष्ठ मान रहे हो।। (8)

स्वयं को जिज्ञासु प्राथमिक विद्यार्थी सम मान रहे हो।
स्व-अज्ञान व अल्पज्ञता दोषों को जानकर, उससे भी दूर हो रहे हो।।

तेरे शोध-बोध यंत्र अतएव, हर क्षेत्र में हो रहे प्रयोग।
हर देश की शिक्षा से लेकर धर्म, राजनीति व्यापार कानून में प्रयोग।। (9)

सीपुर, दिनांक 28.10.2016, अपराह्न 3.08

धर्म का सत्य स्वरूप व विकृत रूप तथा दोनों के फल

(चाल : तुम दिल की.....)

समता-शांति शुचिता-सत्य होता है यथार्थ धर्म।
शुद्ध-बुद्ध आनंद (को) पाना धर्म पालन का है मर्म।। (ध्रुव)

जितने अंश में जो पालते समता-शांति-शुचिता आदि।
उतने अंश में वे पाते शुद्ध-बुद्ध आनंद आदि।।

संपूर्ण समता-शांति से होते हैं पूर्ण शुद्ध-बुद्ध।
इसी हेतु ही धर्म पालनीय, अन्यथा न होता है धर्म।। (1)

इससे विपरीत करते हैं रूढ़िवादी-कट्टर-धार्मिक।
समता-शांति न सेवन करते, न बनते हैं शुद्ध-बुद्ध।।

संकीर्ण स्वार्थ ख्याति पूजा लाभ हेतु करते हैं बाह्य धर्म।
दिखावा आडम्बर रूढ़ि परंपरा से पालन करते थोथा धर्म।। (2)

समता से विपरीत विषमता करते, करते हैं राग द्वेष मोह।
ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा भेद-भाव सहित करते हैं वाद-विवाद कलह।।

(जिससे) शांति से विपरीत अशांति होती, जो दुःख के मुख्य कारण।
अशांति से चित्त चंचल होता, जिससे होता पाप बंधन।। (3)

जिससे तन-मन-आत्मा अस्वस्थ होते न हो पाते महान् काम।
ध्यान-अध्ययन-मनन-चिंतन, शोध-बोध-लेखन काम।।

जिससे शुचिता नहीं आती अतएव क्षमा-मार्दव न होते।
सरल-सहजता-विनय-उदारता आदि गुण न होते।। (4)

जिससे सत्यग्राहिता नहीं आती गुण ग्रहण भी नहीं होता।
हित-ग्रहण अहित-त्याग बिन, धर्म का शुभारंभ नहीं होता।।

परम सत्य स्व-शुद्धात्मा स्वरूप, जो है सच्चिदानंदमय।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित, शुद्ध-बुद्ध व आनंदमय।। (5)

यह ही जीवों का निज स्वरूप जो है स्वधर्म व सुधर्म।
इसे प्राप्त हेतु जो होती साधना वह है व्यवहार धर्म।।

इससे भिन्न अन्य सभी है ढोंग-पाखण्ड व रूढ़ि परंपरा।
संकीर्ण स्वार्थ व वर्चस्व आदि जिससे उत्पन्न अनर्थ सारा।। (6)

धर्म न व्यापार व राजनीति धर्म तो आत्मा का शुद्ध स्वरूप।
इसे प्राप्त हेतु ही 'कनकनन्दी' त्याग रहा है अधर्म रूप।। (7)

सीपुर, दिनांक 27.10.2016, रात्रि 8.27

''मैं'' की आत्मकथा-आत्मव्यथा-शुद्धावस्था

(चाल : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

'मैं' हूँ आत्मा सबसे महान्, सबसे महान् मेरे गुण।
अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्य, आदि मेरे होते अनंत गुण।। (ध्रुव)

मैं हूँ स्वयंभू स्वयंपूर्ण, अनादि अनंत ज्ञानवान्।
सच्चिदानंद मैं हूँ जीव सत्य शिव सुंदर आनंद घन।।

अनादि काल से कर्मबंध से, बना हुआ हूँ अशुद्ध जीव।
चौरासी लाख योनि चतुर्गति में, भ्रमण कर रहा हूँ अभी तक।। (1)

राग द्वेष मोह काम क्रोधादि से, जब तक रहा हूँ मोहित।
तब तक मैं स्वयं को शरीर माना, न जान पाया स्व-आत्म तत्त्व।।

शरीर जन्म से स्व-जन्म माना, मरण से स्व-मरण।
शरीर वृद्ध से स्व-वृद्ध माना, जन्म से मृत्यु तक जीवन।। (2)

शरीर संबंधियों को स्व-कुटुंब माना, माता-पिता-भाई-बहन।
शरीर के वर्ण-भार आदि को, माना स्व-रंग व भार।।

सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-डिग्री को, माना यह है मेरी।
दैहिक-भौतिक लाभ-हानि को, माना स्व-लाभ-हानि।। (3)

राग द्वेष काम क्रोध मोहादि को, न जाना पर स्वरूप।
इन सब कारणों से 'मैं' हूँ आत्मा, न जाना यथार्थ रूप।।

योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भवभाव, प्राप्त कर जाना (हूँ) 'मैं' आत्म रूप।
देव-शास्त्र-गुरु निमित्त पाकर, जाना मैं शुद्ध स्वरूप।। (4)

स्वरूप श्रद्धान ज्ञान आचरण से, नाशकर पर स्वरूप।
मैं ही मुझमें मैं को पाकर, पाऊँगा सच्चिदानंद रूप।।

मैं ही मेरा (रूप) चैतन्य स्वरूप, मुझमें ही मेरे गुण।
मैं की आत्मकथा मेरे द्वारा, लिखित 'कनक' का निज रूप।। (5)

अहमेक्को खलु सुद्धो दंसणणाणमय सया (सदा) अरूपी।
मैं हूँ एक निश्चय से शुद्ध दर्शन ज्ञान मय सदा अरूपी।।

ऐसा वर्णन सर्वज्ञ ने किया, उपदेश दिया विश्व को।
मुझे ही प्राप्त करने हेतु, धर्म आराध्य हो सभी को।। (6)

सीपुर, दिनांक 28.10.2016, धन्यतेरस, रात्रि 12.35
(श्रमणी सुवत्सलमती माताजी की भावना से यह कविता सृजित हुई।)

माँ की आत्मकथा व आत्मव्यथा

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

माँ मेरा नाम है, जन्म देना काम है।
पालन-पोषण-सुरक्षा-संवर्द्धन महान् काम है।। (1)

माता, जननी, जन्मदायिनी, प्रसु, अम्बा आदि मेरे नाम (है)।
'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियसी' प्रसिद्धि सम्मान (है)।। (2)

पशु-पक्षी से लेकर मानव तक, मेरे अनेक है रूप।
अण्डा से लेकर शिशु रूप में, देती संतान को जन्म है।। (3)

'वात्सल्य' शब्द मुझसे जन्मा, जो निःस्वार्थ सेवा का भाव (है)।
श्री-ह्री-धृति कीर्ति-बुद्धि-विद्या-शक्ति/(मुक्ति) मुझसे उपमान/(उपमेय) है।। (4)

जो जिसको जन्म देती वह उसकी जन्म दायिनी माता है।
श्रद्धा-प्रज्ञा आचरण दाता गुरु भी, होती आत्मा की माता।। (5)

शरीर की माता से भी श्रेष्ठ, होती है आध्यात्मिक माता।
संसार तारक मोक्ष प्रदायक, होती है आध्यात्मिक माता।। (6)

जन्म देना लालन-पालन करना, संवर्द्धन सुरक्षा करना।
अहित निवारण हित में प्रवर्तन, सुख-दुःख में साथ निभाना।। (7)

पशु-पक्षी व कीट-पतंग रूप में, मेरा मातृत्व स्वरूप।
मानुषिनी माता के समान या अधिक होता आदर्श रूप।। (8)

गोमाता का तो आदर्श स्वरूप सर्वत्र प्रसिद्धि होता।
घड़ियाल ऑक्टोपस माता हथिनी माँ स्वरूप भी श्रेष्ठ होता।। (9)

मेरा कुछ अबला शाकाहारी रूप भी, संतान रक्षा हेतु प्रसिद्धि।
संतान रक्षा हेतु बलवान् क्रूर शिकारी से लड़ना प्रसिद्धि।। (10)

संतान रक्षा हेतु बन जाती हूँ (मैं) रणचण्डी दुर्गामाता।
शेर, चीता, घड़ियाल, अजगर शिकार से लड़ूँ बनकर दुर्गामाता।। (11)

गाय, भैंस, बकरी, भेड़ रूप में, मेरा मातृत्व तो निराला।
स्व-संतान के साथ-साथ ही, मनुष्य को भी दूध पिलाना।। (12)

किन्तु हाय! मेरे आदर्श रूप को, कुछ माता कलंकित करती।
मानुषिनी रूप में कुछ माता संतान की हत्या तक करती।। (13)

मेरा आदर्श स्वरूप की ही सर्वत्र ही स्वीकार्य योग्य।
इस हेतु ही 'कनक गुरु' लिखा, मेरी आत्मकथा काव्य।। (14)

सीपुर, दिनांक 29.10.2016, प्रातः 6.31 कार्तिक कृष्णा स्वरूप चतुदर्शी

संदर्भ-

शरणमशरणं वो बन्धवो बन्धमूलं।
चिरपरिचितदारा द्वारमापद्गृहाणाम्।
विपरिमृशत पुत्राः शत्रवः सर्वमेतत्।
त्यजत भजत धर्मं निर्मलं शर्मकामाः।। (60) आ.शा.

हे भव्य जीवों! जिसे तुम शरण (गृह) मानते हो वह तुम्हारा शरण (रक्षक) नहीं है, जो बंधुजन हैं वे राग-द्वेष के निमित्त होने से बंध के कारण हैं, दीर्घकाल से परिचय में आई हुई स्त्री आपत्तियों रूप गृहों के द्वार के समान हैं तथा जो पुत्र हैं वे अतिशय राग-द्वेष के कारण होने से शत्रु के समान हैं; ऐसा विचार कर यदि आप लोगों की सुख की अभिलाषा है तो इन सबको छोड़कर निर्मल धर्म की आराधना करें।

इसके विपरीत गुरु और धर्म ही हमारे यथार्थ से परम उपकारी माता-पिता एवं बंधु है। यथा-

धर्मो गुरुश्च मित्रं च धर्मः स्वामी च बांधवः।
अनाथ वत्सल सोऽयं स त्राता कारणं विना।।

धर्म ही गुरु है, मित्र है, स्वामी है, बांधव है, अनाथ का रक्षक है, बिना स्वार्थ के रक्षण करने वाला हैं।

गुरुरेव भवेन्भ्राता, गुरुरेव भवेत्पिता,
गुरुरेव भवेत्भ्राता, गुरुरेव भवेद्धितः।
गुरुः स्वामी गुरुर्भर्त्ता, गुरुर्विद्या गुरुर्गुरः,
स्वामी गुरुर्गुरुर्मोक्षो, गुरुर्बन्धु गुरु सखा।।

गुरु ही माता है, गुरु ही पिता है, गुरु ही भाई है, गुरु ही हितकारक है, गुरु ही स्वामी है, गुरु ही भरण-पोषण करने वाला है, गुरु ही विद्या है, गुरु ही महान् है गुरु ही

मोक्ष प्रदाता है, गुरु ही बंधु है और गुरु ही मित्र है।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बंधु च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या च द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम गुरुदेवः।।

हे गुरुदेव! आप ही मेरे माता हैं, आप ही मेरे पिता हैं आप ही मेरे बंधु हैं, आप ही मेरे सखा हैं, आप ही मेरी विद्या हैं आप ही मेरे द्रव्य (धन, संपत्ति) हैं और आप ही मेरे सर्वेसर्वा हैं।

गर्भ जन्म किसके होता है?

जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः। (33)

Uterine birth is of 3 kinds:

जरायुज Umbilical birth in a yolk, sack, flesh envelope, like a human child.

अण्डज Incubatory. Birth from a shell like an egg.

पोत Unumbilical. Birth without any sack or shell, like a cub of a lion or a kitten.

जरायुज, अण्डज और पोतज जीवों का गर्भ जन्म होता है।

(1) जरायुज–जाल के समान प्राणियों के परिआवरण को जरायु कहते हैं। गर्भाशय में प्राणी के ऊपर जो माँस और रक्त का जाल के समान आवरण होता है उसे जरायु कहते हैं। मनुष्य, गाय, भैंस आदि के जन्म जरायुज हैं। जरायुज प्राणी आधुनिक विज्ञान के अनुसार और जैन धर्म के अनुसार उन्नतशील जीव होते हैं। विशेषतः ये जीव स्थलचर होते हैं।

(2) अण्डज–शुक्र और शोणित से परिवेष्टित नख के ऊपरी भाग के समान कठिन और गोलाकार अण्डा होता है। जो नख की छाल के समान कठोर हो, पिता के वीर्य और माता के रक्त से परिवेष्टित हो तथा श्वेत वर्ण तथा गोलाकार हो उसका नाम अण्डा है। इस अण्डे में जन्म लेने वाले को अण्डज कहते है। चील, कबूतर, तोता, मैना (सारिका) आदि अण्डज प्राणी है। यह प्राणी विशेषतः आकाशचर होते हैं। कुछ अण्डज जलचर भी होते हैं जैसे-घड़ियाल (मगरमच्छ)।

(3) पोतजन्म–सम्पूर्ण अवयव तथा परिस्पन्द सामर्थ्य से उपलक्षित पोत है। जो गर्भाशय से निकलते ही चलने-फिरने के सामर्थ्य से युक्त हैं-सम्पूर्ण अवयव

वाला है और जिसके ऊपर कोई आवरण नहीं है वह पोत कहलाता है। जरा में उत्पन्न होने वाला जरायुज, अण्डे में उत्पन्न होने वाला अण्डज और आवरण रहित पोत है।

साधु मेरा नाम है

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

साधु मेरा नाम है, आत्म-साधना काम है,
साधना से सिद्ध बनना, मेरा सर्वोच्च काम है।। (ध्रुव)

इस हेतु त्यागा धन-जन, मान सम्मान सारे,
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि, अपना-पराया सारे।। साधु...

राग-द्वेष-मोह-क्षय हेतु, कर रहा हूँ साधना,
एकांत-मौन-निस्पृहता से, कर रहा आत्म-आराधना।। साधु...

ज्ञान-ध्यान व तप-त्याग, करता आत्महित हेतु,
ढोंग पाखण्ड-आडम्बर त्याग, करता आत्मसाधन हेतु।। साधु...

रूढ़ि-परंपरा-रीति-रिवाज, संकीर्ण मत-पंथ परे।
सत्य-समता-शांति सहित, ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा परे।। साधु...

सरल-सहज-पावन युक्त, लंद-फंद-द्वंद्व रिक्त,
आत्मविशुद्धि रमण युक्त, 'कनक' आत्मसाधना युक्त।। साधु...

सीपुर, दिनांक 15.10.2016, मध्याह्न 2.37

हँसी मेरा नाम है

(हँसी से स्वास्थ्य लाभ)

(चाल : जीना यहाँ मरना यहाँ....., छोटू मेरा नाम है.....)

हँसी मेरा नाम है...प्रसन्न करना काम है।
तनाव को दूर करके...स्वस्थ्य करना काम है।।

सकारात्मकता मुझसे बढ़ती...जिससे बढ़ती मित्रता।
जिससे सौहार्द्र एकता बढ़ती, नहीं रहती उदासीनता।।

एंडोर्फिन हॉर्मोन (का) स्राव होता, जिससे सकारात्मकता बढ़ती।
कार्टिसोल हॉर्मोन भी कम होता, जिससे तनाव भी घटता।। (1)

माँसपेशियों में खिंचाव होता, रक्तचाप भी मुझसे बढ़ता।
ऑक्सीजन भी पर्याप्त मिलती, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती।।

शरीर के दर्द भी कम होते, तन-मन भी हल्के होते।
दर्द निवारक औषधि बिना, मुझसे दर्द भी कम होते।। (2)

बच्चे मुझे अधिक प्यार करते, दिन में तीन सौ (300) बार हँसते।
प्रसन्न होते व प्रसन्न कराते, हँसी-खुशी से खिले रहते।।

मुझसे बड़े द्वेष/(घृणा) करते, अस्त-व्यस्त-संत्रस्त होते।
तनाव (व) अहंकार को प्यार करते, तन-मन-अस्वस्थ-दुःखी रहते।। (3)

बिना रुपयों (डिग्री/प्रसिद्धि) से मैं प्राप्त होती, सरल व्यक्तियों को मैं चाहती।
भाग्यशाली को मैं मिलती, 'कनक' को मैं वरण करती।।

निर्मल मन से जो प्राप्त करता, खिलखिलाकर हँसी हँसते।
आनंदाश्रु अविरल बहता, पेट-हिलता गला साफ होता।। (4)

अट्टहास्य/(अश्लील) मेरा विकृत रूप, दंभी लोग मुझे करते प्राप्त।
मेरा यह स्वरूप पाप कारक, नहीं सेवनीय मेरा ये रूप।। (5)

सीपुर, दिनांक 13.10.2016, रात्रि 12.12

भाषा मेरा नाम है (भाषा की आत्मकथा)

(भाषा का शुद्ध स्वरूप व अशुद्ध रूप)

(चाल : पूछ मेरा क्या रे.....)

भाषा मेरा नाम है, अभिव्यक्ति मेरा काम है।
दिव्य ध्वनि से लिखित तक, मेरा अनेक काम है।।

ध्वनि-अक्षर-वर्ण-पद, वाक्य से लेकर ग्रंथ तक।
कथित-लिखित गद्य-पद्य, नाटक चम्पू टीका तक।।

क्षुद्र भाषा से महाभाषा तक, मेरा अनेक विध रूप है।
व्याकरण रिक्त क्षुद्र भाषा, व्याकरण युक्त महाभाषा।।

सात सौ अठारह (718) भाषा दिव्य ध्वनि, सर्वज्ञ देव की खिरती है।

सात सौ (700) होती क्षुद्र भाषा, अठारह (18) होती महाभाषा।।

भाषा पर्याप्ति युक्त द्वीन्द्रिय से, तीर्थंकर तक की भाषा।
मनुष्य-देव नारकी जीव, बोलते है स्व-स्व-भाषा।।

हित-मित व प्रिय कथन/(लेखन), स्पष्ट शालीन हो मुझमें।
अहित-असत्य-क्रूर-अश्लील, निन्दा-विकथा न हो मुझमें।।

क्षुद्र भाषा/(बोली) में न व्याकरण होता, शुद्ध भाषा/(महाभाषा) में होता व्याकरण।
व्याकरण से होती भाषा शुद्धि, संस्कृत में यथा विशुद्धि।।

स्वर-व्यंजन-मात्रा की शुद्धि, ह्रस्व-दीर्घ व प्लुत-शुद्धि।
लघु प्राण महाप्राण की शुद्धि, लिंग-कारक-क्रिया शुद्धि।।

शब्द-अर्थ भाव की शुद्धि, जिससे मेरी होती विशुद्धि।
अन्यथा अर्थ भी अनर्थ होते, ज्ञानावरणीय आदि कर्म बंधते।।

विषय-प्रतिपादन सही न होते, श्रोता-शिष्य सही समझ न पाते।
हित भाषा गुरु हेतु आवश्यक, मित प्रिय कथन सापेक्ष।।

मैं नहीं हूँ वस्तु स्वरूप, विषय कथन हेतु मेरा प्रयोग।
वाच्य-वाचक होता संबंध मैं हूँ वाचक विषय होता वाच्य।।

ज्ञान-विज्ञान सभ्यता-संस्कृति, मुझसे होती भावना-अभिव्यक्ति।
प्रचार-प्रसार संबंध-संचार, मुझसे होते विभिन्न प्रकार।।

शब्द ब्रह्म से पर ब्रह्म का ज्ञान, मेरे द्वारा भी होता संबंध।
मेरा सही ज्ञान करो ज्ञानार्थी मेरा काव्य लिखा 'कनकनन्दी'।।

सीपुर, दिनांक 14.10.2016, मध्याह्न 2.45

पशु मेरा नाम है

(मैं जंगली पशु हूँ या क्रूर कृतघ्न मानव जंगली पशु!?)

(पशु की आत्मकथा व आत्मव्यथा)

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे!....., सायोनारा.....)

पशु मेरा नाम है, प्राकृतिक काम है।

प्राकृतिक संतुलन हेतु, बहुत मेरा काम है।। (ध्रुव)

जंगल मेरा प्राकृतिक निवास, जन्म-मरण व सुख-दुःख में।
भोजन-पानी घूमना-फिरना, रहना सोना सभी जंगल में।।

सम्पन्न जंगल मेरे कारण, फलता-फूलता बढ़ता है।
रक्षित सुंदर कलरव युक्त, उपयोगी मानव हेतु।। (1)

मेरी कुछ प्रजाति को मानव, प्राचीन काल से पालता।
गाय भैंस बकरा बकरी भेड़, कुत्ता-बिल्ली हाथी घोड़ा आदि।।

जिससे मानव को दूध मिलता, दही-मट्ठा-मक्खन घी पाता।
कृषि में मेरा सहयोग लेता, यातायात परिवहन में काम लेता।। (2)

स्व-सुरक्षा हेतु काम भी लेता, खेल-सर्कस में प्रयोग करता।
मेरे आलंबन से जीवन जीता, मनोरञ्जन-व्यापार करता।।

मुझे मारता व भक्षण करता, धर्म हेतु बलि भी देता।
बंधन व क्रय-विक्रय करता, प्राकृतिक आवास नष्ट करता।। (3)

बिगाड़ता प्रकृति संतुलन, ग्लोबल वार्मिंग भी बढ़ता।
अति वर्षा-हीन वर्षा होती, प्रदूषण से समस्याएँ बढ़ती।।

तो भी मानव मुझे हीन मानता, स्वयं को ही श्रेष्ठ मानता।
मैं उपकारी मानव का, कृतघ्न बन (मेरा) संहार करता।। (4)

बिन मानव मैं जीवित भी रहता, सुख-शांति से जीवन जीता।
मेरे बिन मानव सुखी न होता, तो भी मुझे जंगली क्रूर मानता।।

मानव सप्तम नरक तक जाता, मैं तो अधिकतम पञ्चम में जाता।
मुझे प्यार करते महामानव, तीर्थंकर बुद्ध ऋषि पशु प्रेमी।। (5)

महापुरुष मुझे सम्मान देते, समवशरण में स्थान देते।
देवी-देवताओं से संबंध होता, 'कनक' मम हित चिंतन करते।। (6)

सीपुर, दिनांक 20.10.2016, प्रातः 6.16

अंधा मेरा नाम है (विभिन्न प्रकार के अंधे)

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे....., छोटू मेरा नाम है.....)

अंधा मेरा नाम है, नहीं देखना काम है।
सत्य-तथ्य वस्तु स्वरूप को, नहीं देखना काम है।। (1)

मेरे विभिन्न रूप होते, चक्षु से लेकर विवेक है।
चक्षुअंध नहीं यथार्थ अंध, चक्षुअंध हो सकता प्रज्ञाचक्षु।। (2)

चक्षुअंध से भी अधिक अंध, मोहांध, ज्ञानांध (कामांध) स्वार्थांध।
प्रकाश में भी चक्षु से युक्त, नहीं जान पाते हैं सत्य-असत्य।। (3)

मोहांध अवस्था में मैं तो नहीं जान पाता हूँ आत्म-अनात्म।
शरीर को मैं आत्मा मानता, धन-जन-मान को मेरा मानता।। (4)

शरीर पोषण भोगोपभोग को, सत्ता-संपत्ति प्रसिद्धि को।
'मैं' या 'मेरा' मानकर करता हूँ, राग द्वेष काम क्रोध आदि को।। (5)

यह अवस्था ही मेरी जघन्य अवस्था, इसी से बनता ज्ञानांध आदि।
साक्षरी निरक्षरी (आदि) अवस्था में, नहीं जान पाता हूँ हिताहित।। (6)

स्वार्थांध के कारण मैं नहीं जानता, स्व-पर हित अहित आदि।
अन्याय अत्याचार शोषण-मिलावट, करता भ्रष्टाचार चोरी आदि।। (7)

कामांध अवस्था के कारण मैं, होता आसक्त भोगोपभोग में।
स्व-परस्त्री-वेश्या में आसक्त हो, सेवन करता हूँ फैशन-व्यसन।। (8)

इन सब अवस्थाओं के कारण, न कर पाता स्व-पर कल्याण।
स्व-पर कल्याण हेतु अंधत्व त्यागूँ, इस हेतु 'कनक' बनाया काव्य।। (9)

सीपुर, दिनांक 16.10.2016, मध्याह्न 2.58

मूर्ख की आत्मकथा व आत्मव्यथा (कुशिष्य-सुशिष्य)

(मूर्ख से प्राप्त शिक्षाएँ)

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे....., आत्मशक्ति.....)

मूर्ख मेरा नाम है, दुर्गुणों की खान है।

तो भी स्वयं को श्रेष्ठ मानूँ, ऐसा मेरा अभिमान है।। (स्थायी)

मेरे अनेक पर्यायवाची, मूढ़-अज्ञ-अबोध-जड़।
बुद्धिहीन, बेवकूफ, अज्ञानी, अविवेकी, नादान, भोंदू उजबक।।

मोह के कारण मैं अज्ञानी होकर न जानता सत्य-असत्य।
हित-अहित में हूँ अंधा बधिर, तो भी मानूँ स्वयं को श्रेष्ठ।। (1)

मेरे अनेक रूपक अलंकार होते, जिससे मैं होता प्रसिद्ध।
कूपमण्डूक, गधा, भैंसा, भेड़िया, आदि मेरी उपाधि प्रसिद्ध।।

उक्त उपाधि प्राप्त हेतु मेरी होती निम्नोक्त उपलब्धियाँ।
अहंकार, हठाग्रह, दुराग्रह, कुतर्क, अप्रिय कथन, अमान्य नीतियाँ।। (2)

मैं न बनता योग्य श्रोता-शिष्य, जिससे मेरे अलंकार न होते दूर।
मच्छर, जोंक, पत्थर, चालनी, मेढा, भैंसा, फूटा घड़ा सम (मेरे) गुण होते।।

सही-गलत की मुझे चिंता न होती, जिससे मैं निश्चिन्त होता।
खाता-पीता-सोता रहता, जगने पर परनिंदा/(कलह) करता।। (3)

अन्य के दिमाग मैं खाता रहता, सभी मुझे माने ऐसा मानता/(कहता)।
सबके सिर पर चढ़ना चाहता, मनमाना सभी बातें बताता/(काम करता)।।

ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-पक्षपात, फैशन-व्यसन भी करता।
आलस-प्रमाद-संकीर्णता युक्त, क्रूर कठोर काम भी करता।। (4)

स्वयं को मैं सच्चा-अच्छा मानता, अन्य सभी को मूर्ख मानता।
मूर्खों की ही संगति करता, ज्ञानी सज्जनों से दूर रहता।।

नीति-नियम-सदाचार ज्ञान-विज्ञान सभ्यता-संस्कृति।
आत्मा-परमात्मा, पुण्य-पाप को, जानने की मेरी नहीं प्रवृत्ति।। (5)

मुझे क्या लेना-देना समाज-राष्ट्र-विश्व में क्या हो रहा।
मैं तो मेरी उपलब्धियों में मस्त, उसी हेतु मेरा काम हो रहा।।

इनको तब तक सही माना, जब तक (मेरा) सातिशय पुण्य न जगा।
अनुभवी ज्ञानी गुणी सज्जन से, अज्ञान मोह दूर न भगा।। (6)

जिसको मैं स्वयं के अलंकार मानता था, वे तो मेरे कलंक है।

ऐसा ज्ञान होने पर मैं अभी, दूर कर रहा हूँ उक्त कलंक।।

अंधा यथा सूर्य देख न पाता, तथाहि मैं ज्ञान न जान पाया।
जितने अंश में जान रहा हूँ, उतने अंश में अज्ञान को जाना।। (7)

अभी मुझे अनुभव हो रहा, अज्ञान अवस्था में होता न भान।
अंधेरा से यथा अंधेरा न मिटे, अज्ञान से नाश न होता अज्ञान।।

मेरी आत्मकथा-व्यथा, हर अज्ञानी-मोही जीव की।
मुझसे शिक्षा लेने हेतु, कविता बनी 'कनक' की।। (8)

सीपुर, दिनांक 26.10.2016, रात्रि 9.08
(यह कविता श्रमणी सुवत्सलमती के अनुरोध से बनी।)

संदर्भ-

शक्यो वारयितुं जलेन दहनं छत्रेण सूर्यातपो
व्याधिर्भैषजसंग्रहैश्च विविधैर्मन्त्रप्रयोगैर्विषम्।
नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदौ दण्डेन गोगर्दभौ
सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्र विहितं मूर्खस्य नास्त्योषधम्।। (483)
मूर्खत्वं हि सखे ममापि रुचितं तस्यापि चाष्टौ गुणा-
निश्चिन्तो बहुभोजनो वठरता राज्ञौ दिवा सुप्यते।
कार्याकार्यविचारणान्धवधिरो मानापमाने समः
कृत्वा सर्वजनस्य मूर्द्धनि पदं मूर्खः सुखं जीवति।। (484)

अग्नि, पानी से रोकी जा सकती है, सूर्य का घाम, छत्ते से दूर किया जा सकता है, रोग, औषधियों के संग्रह से हटाया जा सकता है, विष, नाना प्रकार के मंत्रों तथा प्रयोगों से ठीक किया जा सकता है, मदोन्मत्त हाथी तीक्ष्ण अंकुश से वश में किया जा सकता है और बैल तथा गधा, दण्ड के द्वारा ठीक किये जा सकते हैं। इस प्रकार सब की औषध शास्त्र में बतायी गयी है परन्तु मूर्ख की कोई औषधि नहीं है।

किसी मित्र ने किसी को मूर्ख कहा। इसके उत्तर में मित्र, मित्र से कहता है कि हे मित्र! मूर्खता मुझे भी अच्छी लगती है क्योंकि उसमें आठ गुण हैं-मूर्ख मनुष्य निश्चिन्त रहता है, बहुत भोजन करता है, ढीठ होता है, रात-दिन सोता है, कार्य और

अकार्य के विचार में अंधा तथा बहरा रहता है, मान-अपमान में मध्यस्थ रहता है, इस तरह मूर्ख मनुष्य सब मनुष्यों के सिर पर पैर देकर सुख से जीवित रहता है।

ज्ञान का अहंकार एवं अज्ञानता का कारण

ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने। (13) स्वतंत्रता के सूत्र, पृ. 571

प्रज्ञा Conceit and; अज्ञान Lack of knowledge, sufferings are caused by the operation of ज्ञानावरणीय, knowledge-obscuring karmas.

ज्ञानावरण के सद्भाव में प्रज्ञा और अज्ञान परीषह होती हैं, प्रज्ञा क्षायोपशमिकी है, अर्थात् ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से होती है, अन्य ज्ञानावरण के उदय के सद्भाव में प्रज्ञा का सद्भाव है अतः क्षायोपशमिकी प्रज्ञा अन्य ज्ञानावरण के उदय में मद उत्पन्न करती है, सर्व ज्ञानावरण कर्म का क्षय हो जाने पर मद नहीं होता। अतः प्रज्ञा और अज्ञान परीषह ज्ञानावरण कर्म के उदय से उत्पन्न होती हैं अर्थात् इन दोनों परीषहों की उत्पत्ति में ज्ञानावरण कर्म का उदय ही कारण है।

केवल ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय होने पर केवलज्ञान होता है केवलज्ञान होने पर किसी भी प्रकार अहंकार नहीं होता है। जो अत्यंत अज्ञानी है, जैसे-एकेन्द्रिय आदि जीव; इनके विशिष्ट क्षयोपशम नहीं होने से तथा तीव्र ज्ञानावरणीय का उदय होने पर विशेष ज्ञान न होने के कारण इनके भी प्रज्ञा और अज्ञान परीषह विशेष नहीं होती है। लोकोक्ति भी है-''रिक्त चना बाजे घना।''

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदूर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति।। (13) (नीतिशतक)

नासमझ को सहज में प्रसन्न किया जा सकता है। समझदार को उससे भी सहज में प्रसन्न किया जा सकता है परन्तु जो न समझदार है, न नासमझ है, ऐसे श्रेणी के मनुष्य को ब्रह्मा भी संतुष्ट नहीं कर सकते।

जो अल्पज्ञ होते हैं वे भयंकर होते हैं। A half mind is always dengerous. The little mind is proud of own condition. संकीर्ण मन एवं कम बुद्धि वाले अधिक अहंकारी होते है। अल्पज्ञ लोग अहंकार से स्वयं को सर्वज्ञ मानकर सत्य को नकारते हैं।

मूर्खस्य पंच चिह्नानि गर्वी दुर्वचनी तथा।
हठी चाप्रियवादी च परोक्तं नैव मन्यते।।

(1) अहंकारी होना (2) अपशब्द बोलना (3) हठग्राही (4) अप्रिय बोलना (5) दूसरों के द्वारा कहा हुआ हित सत्य नहीं मानना। ये मूर्खों के पाँच लक्षण होते हैं।

विद्यार्थी-परिषद् लक्षण

(सा समासओ तिविहा पण्णत्ता तं जहा-1. जाणिया, 2. अजाणिया, 3. दुव्वियड्ढा)।

वह (परिषद्) संक्षेप से तीन प्रकार की कही गई है। यथा-1. ज्ञायिका परिषद् = जिनमत, परमत और गुण-दोष की जानकार परिषद्। 2. अज्ञायिका परिषद् = जिनमत परमत और गुण दोष की अनजान परिषद्। 3. दुर्विदग्ध परिषद् = पण्डितमन्य परिषद्। जिस प्रकार कोई रोटी आधी कच्ची और आधी जली होती है तो अखाद्य होती है उसी प्रकार जिनमें कुछ तो ज्ञान की कमी होती है और कुछ विकृत ज्ञान होता है, तिस पर भी जो अपने आपको पूरा पण्डित मानते फिरते हैं, उन्हें 'दुर्विदग्ध'-पण्डितमन्य कहते हैं।

अब क्रमशः इन तीनों परिषदों के लक्षण बतलाते हैं।

(1) ज्ञानी शिष्य-समूह-

खीरमिव जहा हंसा, जे घुट्टंति इह गुरुगुणसमिद्धा।
दोसे य विवज्जंती, तं जाणसु जाणियं परिसं।। (52) (नंदीसूत्र)

पहली जानकार परिषद् के लक्षण इस प्रकार हैं-जिस प्रकार जातिवान् श्रेष्ठ हंस, जल मिश्रित दूध में से, मात्र दूध ग्रहण करता है और जल को त्याग देता है, उसी प्रकार आचार्य आदि के प्रवचन तथा जीवनगत सद्गुणों को जीवन में ग्रहण कर, गुण समृद्ध बनती है और दोषों का त्याग करती है, उसे 'जानकार परिषद्' समझना चाहिए।

जो जैन धर्म मान्य षड् द्रव्य, नव तत्त्व आदि के तथा परमत के जानकार हैं, जिनमत पर श्रद्धा रखते हैं, सद्गुण और दुर्गुण के पारखी हैं, परन्तु दूसरों के मात्र सद्गुणों की प्रशंसा करते हैं और जीवन में उतारते हैं किन्तु दुर्गुणों की अनावश्यक, निरर्थक निंदा नहीं करते, न जीवन में दुर्गुणों को स्थान देते हैं, वे जानकार परिषद् में

आते हैं। ऐसे लोगों को समझाना अत्यंत सुगम होता है। इन्हें 'पात्र परिषद्' के अंतर्गत समझना चाहिए।

(2) अज्ञानी शिष्य समूह-

जा होई पगइमहुरा, मियछावयसीहकुक्कुडयभूआ।
रयणमिव असंठविया, अजाणिया सा भवे परिसा।। (53)

दूसरी अनजान परिषद् के लक्षण इस प्रकार हैं-जो प्रकृति से मधुर हो = अन्यमति, नास्तिक या अनार्य होकर भी स्वभाव से सरल एवं नम्र हो, मृग के बच्चे, सिंह के बच्चे, या कुकड़े के बच्चे के समान हों = जैन कुल के होकर भी जैन धर्म से अनजान हो, असंस्थापित = असंस्कृत अघटित रत्न की भाँति जिसके गुण अब तक छुपे पड़े हों, वह 'अजानकार परिषद्' होती हैं।

1. चाहे व्यक्ति अन्य मत का या नास्तिक हो, पर यदि वह सरल अन्तःकरण वाला हो, नम्र हो, सत्य मत के सामने आने पर अपने मत का आग्रह करने वाला नहीं हो, सत्य का समादर करने वाला हो, तो उसे समझाना सरल है। इसी प्रकार यदि कोई शिकारी, कसाई आदि अनार्य, पापाचरण करने वाले हो, पर वे भी स्वभाव से सरल हो, तो उन्हें समझाना सरल है।

2. अथवा जो मृग के बच्चे के समान कभी बहक सकते हैं, परन्तु अब तक किसी के बहकावे में नहीं आये हैं, ऐसे जैन कुल के मंदबुद्धि बच्चों को भी समझाना सरल है।

3. जो कुकड़े के बच्चे या सिंह के बच्चे के समान युद्ध-धर्मी और क्रूर बन सकते हैं, पर तब तक पापमति और पापाचारी नहीं बने हैं ऐसे अन्यमति के या नास्तिकों के या नीच जाति के बालकों को, बाल्यावस्था के रहते हुए अच्छे संस्कार देना सरल है।

4. अथवा जैसे अघटित रत्न में गुण छुपे रहते हैं और ज्यों ही उन्हें घर्षण और संस्कार मिलता है, उनके गुण प्रकट हो जाते हैं, उसी प्रकार जिस बालक में बुद्धि आदि छुपी पड़ी हैं, जिसे केवल थोड़े से शिक्षण और मार्गदर्शन की आवश्यकता है, वह मिलते ही जो जानकार बन सकता हो, उसे समझाना सरल है।

5. अथवा प्रौढ़ होकर भी जिन्हें जिनधर्म श्रवण का योग नहीं मिलने से जिनकी बुद्धि अभी तक सत्य प्राप्त नहीं कर सकी हैं, उन्हें भी समझाना सरल है।

ऐसे सभी प्राणी 'अजान परिषद्' के अंतर्गत हैं। जानकार परिषद् की अपेक्षा इन्हें समझाने में विलंब और प्रयत्न लगता है, पर ये समझ जाते हैं। अतः ये भी पात्र परिषद् हैं।

(3) पंडितमन्य-शिष्य-समूह-

न य कत्थइ निम्माओ, न च पुच्छइ परिभवस्स दोसेणं।
वत्थिव्व वायपुण्णो, फुट्टइ गामिल्लय रियड्ढो।। (54)

तीसरी दुर्विदग्ध परिषद् के लक्षण इस प्रकार हैं-

जो न स्वयं किसी विषय या शास्त्र में विद्वत्ता रखते हैं, न परिभव दोष से किसी से कुछ पूछते हैं (हार या लघुता के भय से किसी विद्वान् से ज्ञान ग्रहण नहीं करते हैं) परन्तु जैसे वायु से भरी मसक, केवल वायु से फूली हुई होती है, उसमें प्रवाही या घन कोई पदार्थ नहीं होता, उसी प्रकार जो किसी ठोस ज्ञान के बिना ही, वायु के समान कुछ दो चार पद, गाथाएँ, युक्तियाँ, उदाहरण आदि को सुनकर अपने आपको महान्-पण्डित मानकर फूले फिरते हैं, ऐसे ग्रामीण दुर्विदग्धों (= लाल बुझक्कड़ों) के झुण्ड को 'दुर्विदग्ध परिषद्' समझना चाहिए। ऐसे लोगों को यदि समझाना प्रारंभ किया जाये, तो ये लोग उपदेशक के ही आगे-आगे, शीघ्र-शीघ्र विषयपूर्ति करने का प्रयास करते हैं, और कहते हैं-'बस। बस। यह विषय तो हम स्वयं भलीभाँति जानते हैं' ऐसे लोगों को समझाना कठिन है। ये लोग अपात्र परिषद् हैं।

अयोग्य विद्यार्थियों के 14 दृष्टांत

1. सेल-घण, 2. कुडग, 3. चालणि, 4. परिपूणग, 5. हंस, 6. महिस, 7. मेसेय, 8. मसग, 9 जलूग, 10. बिराली, 11. जाहग, 12. गो, 13. भेरी, 14. अभीरी।

1. मुद्गशैल और घन-मेघ, 2. कुट-घडा, 3. चालनी, 4. परिपूणक सुधरी नामक पक्षी का घोंसला, जिसमें घी छाना जाता था, 5. हंस, 6. महिष-भैंसा, 7. मेष-मेढ़ा, 8. मशक-मच्छर, 9. जलौका-विकृत रक्त चूसने वाला एक जलचर जंतु, 10. बिल्ली, 11. जाहक-सेल्हक, चूहे की जाति का तिर्यंच विशेष, 12. गाय, 13. भेरी और 14. अहीर।

जो 1. मुद्गशैल के समान अपरिणामी हो या 2. दुर्गन्धित घट की भाँति

दुष्परिणामी हो, 3. चालनी के समान अग्राही हो या 4. परिपूणक के समान दोष-ग्राही हो, 5. भैंसे के समान अंतराय करने वाला हो या, 6. मच्छर के समान असमाधि करने वाला हो, 7. बिल्ली के समान विनय नहीं करने वाला हो, या 8. गाय-असेवक ब्राह्मणों के समान वैयावृत्य नहीं करने वाला हो, 9. भेरी नाशक के समान भक्ति न करने वाला हो, या ज्ञान का प्रत्यनीक-शत्रु हो, और 10. स्वदोष नहीं देखने वाले अहीर की भाँति आशातना करने वाला, या ज्ञान का विसंवादी हो, वह ज्ञान का अपात्र है। उसे ज्ञान देना अयोग्य है।

जो 1. काली मिट्टी की भाँति परिणामी हो, 2. सुगंधित घट के समान सुपरिणामी हो, 3. कमण्डलू के समान ग्राही हो, 4. हंस के समान गुणग्राही हो, 5. मेष के समान अंतराय नहीं करने वाला हो, 6. जलौका के समान समाधि उपजाने वाला हो, 7. जाहक के समान विनय करने वाला हो, 8. गाय-सेवक ब्राह्मणों के समान वैयावृत्य करने वाला हो, 9. भेरी रक्षक के समान भक्ति करने वाला हो, या ज्ञान का प्रत्यनीक हो और 10. स्वदोष देखने वाले अहीर की भाँति आशातना नहीं करने वाला हो, या विसंवाद नहीं करने वाला हो, वह ज्ञान का पात्र है। उसे ज्ञान दिया जाये।

श्वान (कुत्ता) की आत्मकथा व आत्मव्यथा

(चाल : आत्मशक्ति....., तुम दिल की....., छोटू मेरा नाम रे.....)

मैं हूँ श्वान सबसे निराला, सबसे निराली मेरी शान।
मानव जाति का मैं हूँ साथी, सुरक्षा आदि का करता काम।। (स्थायी)

मेरे अनेक नाम होते श्वान, कुक्कुर, शुनक, सारमेय।
गंडक, कूकर मृगारि, सोनहा डॉग, कुतरा, टेगड़ा।।

'श्वान निद्रा' मेरी प्रसिद्ध है, सोने पर भी न होता लापरवाह।
मेरे मालिक की सुरक्षा हेतु, रहता हूँ मैं सदा सजग।। (1)

मालिक प्रति मेरा अधिक प्रेम है, जिससे मैं स्वप्न में उसे देखता।
स्वप्न में भी मालिक का मुख देखता, उसकी स्माइल को भी देखता।।

मुझमें होती तीव्र घ्राण शक्ति, मानव से लाखों गुणों तक।
अनेक दिन की भी सूक्ष्म गंध को, सूँघ पाना मेरा काम।। (2)

इसके कारण मेरा प्रयोग होता, चोर, तस्कर पकड़ने हेतु।
नशीली वस्तु, बारूदी सुरंग, अपराधी, रोग खोजने हेतु।।

कर्म सिद्धांत के अनुसार मेरा, कर्म उदय भेड़ से पृथक होता।
किन्तु वैज्ञानिक मानते हैं भेड़ को, पालने से मेरा विकास हुआ।। (3)

मेरे गुणस्थान हो सकते हैं, प्रथम से लेकर पंचम तक।
चतुर्थ गुणस्थान में मैं जैन बनता, पंचम में तो श्रावक तक।।

'श्वापि देवोऽपि देवः श्वा' रूप में, मेरा वर्णन है शास्त्र में।
धर्म रहित देव कुत्ता बनता, धर्म सहित मैं बनूँ देव स्वर्ग में।। (4)

मेरी इन्द्रियों की शक्ति से मुझे होता है कुछ भविष्य ज्ञान।
जिसे मानव शकुन कहते, विज्ञान में अभी हो रहा अनुसंधान।।

तो भी कुछ पापी मानव मुझे, मानते हैं अति तुच्छ।
'कुत्ता' बोलकर गाली देते, भले धर्म से रहित होते तुच्छ।। (5)

मेरा दुरुपयोग कुछ पापी मानव, करते हैं शिकार आदि में।
मुझे मारकर कुछ कृतघ्न मानव, खाकर नरक जाते हैं।।

मैं कभी न बनता कृतघ्न, उपकारी को कभी न भूलता।
प्राण देकर भी उपकारी का, प्रत्युपकार करना कभी न भूलता।। (6)

मेरे गुणों को भी तुम मानव सीखो, जिससे तुम बनोगे महान्।
इसलिये ही 'कनकनन्दी' ने, मेरी आत्मकथा का बनाया काव्य।।

मैं हूँ श्वान सबसे निराला, सबसे निराली मेरी शान।
मानव जाति का मैं हूँ साथी, सुरक्षा आदि का करता काम।। (7)

सीपुर, दिनांक 27.10.2016, मध्याह्न 2.52

बहाशी स्वल्पसन्तुष्टः सनिद्रो लघु चेतनः।
स्वामिभक्तश्च शूरश्च षडेते श्वानतो गुणाः।। (20) चाणक्य नीति दर्पण

अर्थ–अधिक भूख रहते भी थोड़े में संतुष्ट रहना, सोते समय होश ठीक रखना, स्वामिभक्त और बहादुरी, ये गुण कुत्ते से सीखना चाहिए।

दीपावली की आत्मकथा-आत्मव्यथा

(चाल : आत्मशक्ति.....)

मैं हूँ दीपावली सबसे निराली, सबसे निराली मेरी शान।
भारतवर्ष की आर्य जाति की, प्राचीन परंपरा व स्वाभिमान।।

मेरे अनेक नाम होते दीपावली, दीपोत्सव, ज्योति पर्व, मोक्ष पर्व।
अज्ञानतम दूर करना मेरा संदेश, अंतरंग-बहिरंग स्वच्छता पर्व।।

(तीर्थंकर) महावीर भगवान् के मोक्ष अनन्तर, दीपक जलाकर मुझे मनाया गया।
रामचन्द्र के अयोध्या आगमन पर, दीपक जलाकर मुझे मनाया गया।। (1)

वर्षा ऋतु के समापन अनन्तर, व शीत ऋतु के आगमन पर।
कृषकों के धान्य उपजने पर, मुझे मनाया जाता है राष्ट्र भर।।

गृह-आँगन को साफ करके व रंगोली से साज-सजाकर।
स्वास्थ्यप्रद विभिन्न मिष्ठान्न अन्य को खिलाकर व खाकर।। (2)

परंपरा व राष्ट्र स्तर पर तेरस से भाई-दूज तक मनाते मुझे।
विदेशों में भी मनाते जैन हिन्दू, कुछ पूर्व मुसलमान शासक तक।।

धन्य तेरस में स्वयं को धन्य करना, तन-मन-आत्मा के स्वास्थ्य से।
स्वरूप चौदस अनंत चतुष्टय से, पूर्ण करना है स्वयं में।। (3)

अमावस्या रूपी अंधेरा में, ज्ञान ज्योति को प्राप्त करना है।
महावीर के निर्वाण महोत्सव में, स्वयं को ज्योतिर्मय बनाना है।।

मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त इस पर्व में, मोक्ष लक्ष्मी आराधना पर्व है।
रामचन्द्र के स्वगृह आगमन से, स्व-स्वरूप प्राप्त पर्व है।। (4)

अन्नकूट में अनंत सुख सम्पन्न, बनने की प्रेरणा देती हूँ।
भाई-दूज में विश्व बंधुत्व की, प्रेरणा देना चाहती हूँ।।

किन्तु हाय! मेरी पावन शिक्षा व, परंपरा विकृत हो रही (है)।
दीपावली को दिवालिया बनाने से, मेरी संस्कृति नष्ट हो रही (है)।। (5)

पटाखे फोड़ते शराब पीते, जुआँ खेलते व मिलावट करते।
घर की गंदगी रास्ते में फेंकते, प्रकाश को अंधकार करते।।

जिससे तन-मन-आत्मा अस्वस्थ होते विविध प्रदूषण बढ़ते।
विविध प्रदूषण बढ़ते पर, तन-मन-आत्मा अस्वस्थ होते।। (6)

धन-जन-साधन का दुरुपयोग होता, मेरे आदर्श नष्ट होते।
अग्निकाण्ड होते धन-जन जलते, गर्भपात भी हो जाते।।

मिलावट होता मूल्य बढ़ता, ढोंग पाखण्ड व दिखावा होते।
ज्ञान ज्योति व मोक्ष लक्ष्मी से, विपरीत काम अभी हो रहे है।
इन विकृति को दूर करने हेतु, 'कनक' काव्य में लिख रहे है।। (7)

सीपुर, दिनांक 29.10.2016, रात्रि 8.44 (स्वरूप चतुर्दशी)

464 सिगरेट के बराबर है एक पटाखा

कितनी सिगरेट के बराबर कौन कितना धुआँ देता है-464 सिगरेट-स्नेक टैबलेट बम, 277 सिगरेट-1000 छोटे पटाखों की लड़ी, 208 सिगरेट-एक पुलपुल, 74 सिगरेट-एक फुलझड़ी, 34 सिगरेट-एक अनार बम।

पुणे के चेस्ट रिसर्च फाउंडेशन ने आँकड़े जारी किये हैं।

दुनिया में सबसे ज्यादा प्रदूषण-बीजिंग, दिल्ली, शंघाई, कराची, टोक्यो, बेंगलूरु।

दिवाली पर सबसे ज्यादा प्रदूषण-20 गुना प्रदूषण भारत में हर साल दिवाली के दिन बढ़ता है, 69 फीसदी प्रदूषण होता है हवा में सर्दियों के कोहरे के दौरान, 8 शहर सबसे खतरनाक होते है दिवाली में दिल्ली, मुंबई, राजस्थान, पंजाब आदि, 64,500 यूजी/एम3 पीपीएम 2.5 छोड़ता है लड़ी वाला पटाखा, 01 सिगरेट पीएम 2.5 की 50 एम3 मात्रा पैदा करती है एक बार में। 25 यूजी/एम 3 है पीएम 2.5 की विश्व में। प्रदूषित नगर में बिना सिगरेट पीये भी रोज 15 सिगरेट पीने से जो रोग होते हैं वे रोग हो सकते हैं।

इस बार आतिशबाजी को ना कहें
मनाये इकोफ्रेंडली दिवाली

दिवाली का त्योहार खुशियाँ लेकर आता है। लेकिन फुलझड़ी, बम, चकरी, रॉकेट, साँप, टिकड़ी जैसे पटाखों को बनाने में कई तरह के कैमिकल प्रयोग होते हैं। इनकी रंग-बिरंगी रोशनी हमें आकर्षित तो करती है लेकिन इसका धुआँ व निकलने

वाली गैस सेहत के लिए घातक है। जानें कौनसा कैमिकल शरीर को कैसे नुकसान पहुँचाता है-

घातक रसायन-नाइट्रिक ऑक्साइड, उपयोग-गैस बनाने के लिए, विषैला प्रभाव-जहरीली गैस फेफड़ों की कोशिकाओं को नुकसान पहुँचाती हैं।

घातक रसायन-कैडमियम कंपाउन्ड्स, उपयोग-कलरिंग एजेंट, विषैला प्रभाव-फेफड़ों को नुकसान, कैंसर और पेट की समस्याएँ।

घातक रसायन-लिथियम कंपाउन्ड्स, उपयोग-लाल रंग पैदा करने के लिए, विषैला प्रभाव-जहरीला, श्वसन तंत्र के लिए घातक, घातक रसायन-कॉपर कम्पाउण्ड्स, उपयोग-नीला रंग पैदा करने के लिए, विषैला प्रभाव-हार्मोन असंतुलन, कैंसर कारक, त्वचा के साथ हर अंग के लिए नुकसानदायक।

घातक रसायन-एल्युमीनियम, उपयोग-कलरिंग एजेंट, विषैला प्रभाव-त्वचा को नुकसान पहुँचाने के साथ अल्जाइमर्स का कारण भी बनता है।

घातक रसायन-एंटीमनी सल्फाइड, उपयोग-कलरिंग एजेंट, ग्लिटर इफेक्ट, विषैला प्रभाव-श्वसन तंत्र में जलन, फेफड़ों के कैंसर का कारण।

घातक रसायन-पोटैशियम नाइट्रेट, उपयोग-ईंधन, विषैला प्रभाव-हर अंग पर बुरा असर।

घातक रसायन-आर्सेनिक कंपाउन्ड्स, उपयोग-कलरिंग एजेंट, विषैला प्रभाव-फेफड़ों का कैंसर, स्किन प्रॉब्लम।

घातक रसायन-बैरियम नाइट्रेट, उपयोग-हरा रंग पैदा करने के लिए, विषैला प्रभाव-कैंसर कारक, रेडियोएक्टिव, पेट और माँसपेशियों के साथ श्वसन और त्वचा के लिए घातक।

घातक रसायन-मरकरी क्लोराइड्स, उपयोग-रिड्यूसिंग एजेंट, विषैला प्रभाव-यह शरीर के अंगों में जमकर नुकसान पहुँचाता है।

बच्चों और युवाओं को नुकसान पहुँचा रहा वायु प्रदूषण

वायु प्रदूषण में शामिल छोटे-छोटे कण युवा और स्वस्थ लोगों की शिरा और धमनियों को भीतर तक नुकसान पहुँचा रही है। इससे हृदय संबंधी बीमारियों, हृदयाघात और उच्च रक्तचाप का खतरा बहुत ज्यादा बढ़ जाता है। विश्व स्वास्थ्य

संगठन (डब्ल्यूएचओ) के ताजे अध्ययन में यह बात सामने आई है।

भारत में हर साल 16 लाख मरते हैं-वायु प्रदूषण से हर साल इंग्लैंड में समय से पूर्व करीब 40 हजार लोगों की मौत हो जाती है। वहीं, भारत में वायु प्रदूषण से हर साल करीब 16 लाख लोगों की मौत हो जाती है। इनमें बच्चे, स्वस्थ युवा और बुजर्ग भी शामिल हैं। डब्ल्यूएचओ ने चेतावनी दी है कहा कि वायु प्रदूषण का मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है।

प्रदूषण से अधिक कोशिकाएँ मरती हैं-इस अध्ययन के लिए वर्ष 2013, 2014 और 2015 में पोवो और उटा शहर के 23 साल से कम उम्र के 72 लोगों के नमूने लिए गए थे। वैज्ञानिकों ने पाया कि जिस समय वायु प्रदूषण की मात्रा बढ़ जाती है उस समय खून में मृत कोशिकाओं की संख्या में इजाफा होने लगता है। हालाँकि, वैज्ञानिक पीएम 2.5 को लेकर अनिश्चितता में है कि यह मनुष्यों के रक्त में प्रवेश करके फेफड़ों को नुकसान पहुँचाता है। इस शोध अध्ययन में शामिल अरुणी भटनागर का कहना है कि वायु प्रदूषण में शामिल छोटे-छोटे कण युवाओं के स्वास्थ्य पर बुरा असर डाल रहे हैं।

धुएँ के असर से कई दिन तक रह सकती है आँखों में जलन

आई-ईयर प्रॉब्लम-पटाखे छोड़ते समय चेहरा सामने होता है। ऐसे में आँख और कान पर चोट लगने की आशंका ज्यादा होती है। इस दौरान कुछ विशेष बातों को ध्यान में रखकर सुरक्षित रह सकते हैं-

आँखों का खयाल-पटाखे चलाते समय यदि आँख में हल्की चिंगारी चली जाए तो उसे हाथ से मसलें नहीं। फर्स्ट एड के रूप में आँखों को सामान्य पानी से धोये। आराम न मिलने पर डॉक्टर को तुरंत दिखाये। कॉन्टेक्स लैंस न पहनें।

अक्सर दिवाली के दूसरे-तीसरे दिन तक बाहर निकलने पर आँखों में जलन महसूस होती है, क्योंकि हवा में प्रदूषण का स्तर बढ़ जाता है। ऐसे में डॉक्टरी सलाह से आई ड्रॉप डालें।

कान की देखभाल-डब्ल्यूएचओ के अनुसार जो लोग लगातार 85 डेसिबल से ज्यादा शोर वाले स्थान में रहते हैं, उनमें सुनने की क्षमता प्रभावित होती है। आमतौर पर 90 डेसिबल के शोर में रहने की अधिकतम सीमा 8 घंटे, 95 डेसिबल

में 4 घंटे व 100 डेसिबल में 2 घंटे से ज्यादा देर तक न रहें। इससे कान का पर्दा फट सकता है। 120 से 155 डेसिबल से ज्यादा शोर सुनने की शक्ति को खराब करता है जिससे कानों में दबाव बढ़ता है और तेज दर्द की शिकायत हो सकती है।

धुएँ व शोर से बचने के उपाय-आसपास ज्यादा शोर हो तो कानों में कॉटन, ईयर प्लग लगाये, पटाखे की चिंगारी या आवाज से यदि कान में दर्द हो तो खुद से कान में तेल न डाले, लापरवाही किये बिना डॉक्टर को तुरंत दिखाये, हर तरह की आतिशबाजी का धुआँ नुकसानदायक है। ऐसे में दिक्कत होने पर नाक-मुँह को रूमाल से ढक लें या मास्क पहन सकते हैं, पटाखे जलाने के लिए माचिस की बजाय अगरबत्ती या मोमबत्ती का प्रयोग करें। वर्ना माचिस की चिंगारी आँख में जा सकती है, घर में यदि किसी को तेज आवाज से परेशानी है तो सावधानी बरतें, ध्यान रखे कि बच्चा पटाखे जलाते समय कुछ खाये नहीं। इनमें मौजूद कैमिकल मुँह के जरिये पेट में जाकर नुकसान पहुँचा सकते हैं। पटाखे चलाने के बाद अच्छे से हाथ धोये।

अस्थमा का प्रभाव कम करती पल्मोनरी वैक्सीन

-डॉ. संदीप नायर

आँकड़ों के मुताबिक दिवाली के बाद भारत में साँस संबंधी रोगियों की संख्या 30 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।

क्या दिवाली अस्थमा रोगियों की परेशानी बढ़ा देती है?

घरों की साफ-सफाई से निकलने वाली गंदगी व धूल और बम-पटाखों से निकलने वाली हानिकारक गैसों के अलावा इनमें मौजूद कॉपर, लेड, कैडमियम, जिंक, सोडियम, पोटैशियम, मैंगनीज जैसे कैमिकल के छोटे-छोटे कण हवा में पहुँचकर उसे जहरीला बना देते हैं। इस जहरीली गैस में साँस लेने से अस्थमा रोगियों में परेशानी बढ़ जाती है। इस कारण बच्चों में ब्रोकियल अस्थमा के मामले भी अधिक हो जाते हैं। इस दिन वातावरण में सल्फर डाई ऑक्साइड का प्रतिशत दस गुना और कुल विषैले तत्त्वों की मात्रा 2-3 गुना तक बढ़ती है। साथ ही ठंडी हवाएँ परेशानी को दोगुना करती हैं जिससे अस्थमा अटैक की आशंका बढ़ जाती है।

त्योहार के दिन अस्थमा रोगी क्या सावधानी बरतें?

धुएँ वाली जगह से दूर रहें। घर में पटाखों का धुआँ आ रहा है तो खिड़की-दरवाजे बंद कर लें। घर से बाहर जाने पर मुँह-नाक को कपड़े से ढके या मास्क पहनें। त्योहार के दिन और दो दिन बाद तक साँस नली को आराम देने के लिए दवा व इंहेलर का प्रयोग करें। रोग से पीड़ित मरीजों को दिवाली से पहले पल्मोनरी वैक्सिनेशन लेने की भी सलाह देते हैं ताकि समस्या न बढ़ सके।

अस्थमा से पीड़ित बच्चों को कैसे रखे सुरक्षित?

जो बच्चे साँस संबंधी समस्याओं जैसे अस्थमा, साइनूसाइटिस, एलर्जी, सर्दी, निमोनिया व एलर्जिक ब्रोंकाइटिस से घिरे है उन्हें धुएँ वाले स्थान से दूर रखें। यदि बच्चे को साँस संबंधी समस्या है तो उसे पटाखे न चलाने दे क्योंकि इस दौरान निकलने वाले रसायन कई प्रकार की एलर्जी का कारण बन अस्थमा अटैक को जन्म देते हैं।

अगर अस्थमा अटैक आए तो तुरंत क्या करें?

तत्काल डॉक्टर द्वारा बताई गई दवा ले व इंनहेलर का प्रयोग करें। लेटे नहीं, सीधे खड़े हो जाये या बैठकर लंबी साँस लें। गर्म कैफीन युक्त पेय पदार्थ जैसे कॉफी जरूर लें, इससे काफी राहत मिलती है।

बी-अलर्ट : खुशियों के सेलिब्रेशन में अस्थमा, हृदय और एलर्जी के रोगी अपना खास ध्यान रखें

पटाखों की तेज आवाज से आ सकता है एंजाइटी अटैक

हर वर्ष मनाये जाने वाले दिवाली के त्योहार में उत्साह और उमंग तो जरूरी है। लेकिन साथ ही आतिशबाजी के दौरान पटाखों से निकलने वाला बारूद और धुआँ सेहत को नुकसान पहुँचाता है। पटाखों की तेज आवाज, कैमिकल व गैस से स्वस्थ व्यक्ति तो परेशान होता ही है साथ ही बच्चे, बुजुर्ग के अलावा हृदय रोग, एलर्जी, साँस से जुड़ी दिक्कत के मरीजों में तकलीफ बढ़ जाती है। जानते हैं किस तरह से सेहत पर इनका असर होता है।

अनियंत्रित हो सकती हैं धड़कनें-जो लोग तेज आवाज से डरते हैं, वे अकूस्टिकोफोबिया से पीड़ित हो सकते हैं। यह एक तरह का मनोरोग है। ऐसे मरीजों को पटाखे की तेज आवाज, शोर-शराबा, बैंड-बाजा व लाउड म्यूजिक से दूर रहना

चाहिए। इनसे दिल की धड़कन अनियंत्रित होने के अलावा जी मिचलाने, साँस फूलने, मुँह सूखने या एंजाइटी अटैक आदि की समस्या हो सकती है।

सतर्कता–तुरंत इलाज के तौर पर एंटीडिप्रेशन ड्रग देकर मरीजों को शांत करने की कोशिश की जाती है। साथ ही तेज आवाज में मरीज के कान पर ईयरप्लग लगाये। रोगी के साथ में कोई बड़ा हमेशा होना चाहिए।

नवजात-बुजुर्गों को परेशानी–हवा में मौजूद जहरीले तत्त्वों और प्रदूषण से नवजात व बुजुर्गों की सेहत पर बुरा असर पड़ने से इंफेक्शन, दमा, साँस की समस्या व एलर्जी भी हो सकती है। धुआँ श्वास-नलिका को बाधित करता है व तेज आवाज से कान का पर्दा फट सकता है।

सतर्कता–छोटे बच्चों व बुजुर्गों को धुएँ से दूर शांत कमरे में रखें। जरूरी दवाये साथ रखें।

गर्भस्थ शिशु को नुकसान–पटाखों से निकली कार्बन मोनो ऑक्साइड गैस गर्भस्थ शिशु तक पहुँचकर विकास बाधित करती है। गर्भावस्था में यदि महिला तेज आवाज सुने तो बच्चा बहरा या कम सुनने की क्षमता के साथ पैदा होता है।

सतर्कता–गर्भावस्था में घर से बाहर न निकले व शरीर को आराम दें। किसी भी परेशानी में डॉक्टरी सलाह लें।

एलर्जी–धूल-धुएँ से होने वाली एलर्जी के रोगियों में पटाखे से निकलने वाले बारूद के सूक्ष्म कण गले से होते हुए फेफड़ों में जाकर परेशानी बढ़ाते हैं। इससे व्यक्ति को बार-बार खाँसी, गले में दर्द व जलन की दिक्कत बढ़ती है।

सतर्कता–प्रदूषण से बचाव के लिए मुँह पर नेजल मास्क पहनकर रखें। साथ ही एलर्जी के कारणों से बचाव ही बेहतर इलाज है।

त्योहार के साथ सर्दी का बढ़ता प्रभाव भी उम्रदराज लोगों के शरीर के सामान्य तापमान को असंतुलित कर देता है।

पटाखे चलाने के बाद हाथ धोकर ही बच्चे को गोद में लें।

हार्ट अटैक की आशंका–पटाखों से निकलने वाली सल्फर डाइऑक्साइड व नाइट्रोजन ऑक्साइड गैस अस्थमा, एलर्जी व हृदय रोगियों की दिक्कत बढ़ाती हैं। इनमें साँस की नली के सिकुड़ने से शरीर में पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं पहुँचती। ऐसे में हृदयाघात व अस्थमैटिक अटैक हो सकता है। बुजुर्ग व कमजोर हृदय वाले तेज

आवाज सहन नहीं कर पाते।

सतर्कता-सावधानी ही बचाव है। मरीज इस दौरान तली-भुनी चीजें न खाये। यदि हृदय काफी कमजोर है या पूर्व में हार्ट अटैक आ चुका है तो घर वाले तेज आवाज वाले पटाखे न जलाये।

-डॉ. पंकज सयाल, डॉ. अनिमेष आर्य, नई दिल्ली

आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुवर से निवेदन

प.पू. सहज सरल परमानंद के निधान मेरे आराध्य वाग्मी गुरु-आदर्श गुरुदेव-दादा गुरुदेव हम सबके ''अभिनव वीरसेनाचार्य गुरुदेव'' दीक्षा जीवन के मार्गदर्शक वैज्ञानिक धर्माचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के श्री पादयुग्म में त्रिभक्ति पूर्व-त्रियोगपूर्वक बारम्बार नमोऽस्तु-नमोऽस्तु-नमोऽस्तु।

आपका स्वास्थ्य आदि कुशल होगा यही कामना करता हूँ, गुरुदेव! आपके उपकारों का ऋण तो मैं आ-मोक्ष पर्यंत भी नहीं चुका सकता, परन्तु फिर भी ये छोटी-सी भेंट संयमोपकरण देकर भी मैं ऋण के बोझ से दब रहा हूँ, क्यूँकि गुरुदेव! इसमें भी मैं आपसे आमरण संयम के निरतिचार पालन के आशीर्वाद की याचना कर रहा हूँ। गुरुदेव! ये शब्द-पुष्प लिखते हुए भी मैं हर्षाश्रु अथवा आनंदाश्रु का अनुभव कर रहा हूँ।

हे! परम उपकारी गुरुदेव! बस यावत् मुक्ति पर्यंत हमें आपके समान ही श्री चरण का समागम प्राप्त होता रहे। सदैव आप जैसे महापुरुष गुरुदेव की सेवा करते-करते ही जीवन-मरण का चक्र समाप्त होते हुए मुक्ति पद की प्राप्ति हो। लिखने के लिए तो दो पंक्ति ही लिखना सोच रहा था, अतः छोटा-सा ही कागज लिया था परन्तु गुरुदेव! आपके बारे में लिखो या सोचो, भाव तरंगे समय-शब्द की सीमा लाँघ देती हैं, अतः अब मैं छोटे-छोटे अक्षर में ही अपनी पूरी बात लिख रहा हूँ। गुरुदेव अगर लिखने में, सेवा में कुछ त्रुटि हो तो अपने इस अबोध बालक को क्षमा करें। मुझे पता है, आप अभी ये ही कह रहे होंगे कि ''मेरा किसी से अक्षम्य भाव नहीं है।'' ''आप महान् है गुरुदेव महान्'' मेरी भावनाओं से, चिन्तन से, निःसृत 2(दो) अथवा 3(तीन) भवावतारी गुरुदेव के चरणों में नमन-वंदन।

आपका पौत्र
मुनि चंद्रगुप्त
दिनांक 26.10.2016, औरंगाबाद

आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव से क्षमायाचना

अध्यात्म मेरू के शिखर पूज्यवर वैज्ञानिक धर्माचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के पावन चरणों में मेरा त्रिकाल त्रिभक्ति सहित नमोऽस्तु-नमोऽस्तु-नमोऽस्तु। संघस्थ द्वय मुनिराज के चरणों में नमोऽस्तु। आर्यिका माताजी को वंदामि।

आशा हैं आपका एवं संघस्थ सभी साधु-वृंद का स्वास्थ्य एवं रत्नत्रय कुशल होगा। यहाँ भी सभी साधु-माताजी का स्वास्थ्य आपके आशीर्वाद से अच्छा है।

सर्वप्रथम तो मैं गुरुदेव आपसे क्षमा चाहती हूँ कि मैंने आपको एक पत्र डाक से प्रेषित किया था लेकिन कुछ अज्ञात कारणों से आपको प्राप्त न हो सका एवं नववर्ष के दिन में भी आपसे आशीर्वाद चाहती थी लेकिन ऐसा कर नहीं सकी। विगत वर्षों में मेरे द्वारा आपका मन-वचन-काय से, ज्ञात-अज्ञात भावों से, संघ में रहते हुए और संघ से बाहर भी किसी प्रकार से भी अविनय हुआ है, आपके मन को ठेस पहुँचाई हो, संघ के सभी साधुओं का भी अनादर किया है तो उन सबके लिए आपसे एवं संघस्थ साधुओं से मैं क्षमा माँगती हूँ और नूतन वर्ष में मेरे अंतरंग में आपकी तरह समता शांति का भाव बने, अध्यात्म की साधना से मेरा जीवन अनुप्रेरित हो, यही आशीर्वाद चाहती हूँ।

गुरुदेव, इस साल का चातुर्मास धर्मसाधना एवं प्रभावनापूर्वक निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो गया। शायद दस नंबर तक कचनेर जी तरफ विहार होगा।

गुरुदेव, मैं और सुनीतिमाताजी दोनों आपको बहुत याद करते हैं। मैं तो जहाँ कही भी लंबा प्रवास रहता है वहाँ आपकी तस्वीर कमरे में अपने सामने ही रखती हूँ। आपके स्मरण एवं दर्शन से सतत आपके जैसे बनने की प्रेरणा प्राप्त होती रहती है, हालाँकि हमारे लिए इस प्रकार का होना बहुत कठिन है क्योंकि यह तो आप जैसे निस्पृह, निराकांक्षी योगी ही कर सकते हैं।

गुरुदेव, कहते हैं कि किसी का भी बार-बार चिंतन करने से मन में बोरियत होने लगती है लेकिन आपके गुणों का बार-बार चिंतन करने से उनमें और भी अनुराग बढ़ता है। सच में गुरुदेव, आप विलक्षण है, अनुपम-अद्वितीय-अद्भुत त्यागी है। मैं हमारे पास जो भी लड़कियाँ आती हैं, उन्हें आपके बारे में बताती रहती हूँ। उन सबको भी आपके बारे में सुनकर दर्शन करने की बहुत इच्छा है।

संध्या दीदी ने भी, जब वह दस लक्षण में आपके पास आई थी तब उसे

आपके सान्निध्य में जो भी सुखद अनुभव हुए, वह बताये। वह सब सुनकर मुझे बहुत अच्छा लगा। वह कह रही थी कि गुरुदेव के चरणों में अत्यंत शांति का अहसास होता है। आप अपनी आत्म प्रभावना से ही धर्म की अद्भुत प्रभावना करते हैं। गुरुदेव के आश्रय में सच्चा धर्म का मर्म समझ में आता है।

गुरुदेव, मेरा परम सौभाग्य है कि मुझे सच्चे गुरु के प्रति श्रद्धा हुई है। आपके प्रति इस श्रद्धा भाव ने मेरे अंतरंग के दुर्भावों को दूर किया है एवं दीक्षा लेकर एक साधक के लिए जीवन में क्या अभीष्ट होना चाहिए यह समझ में आया है। आपकी पवित्र प्रेरणा से मैं अपनी समस्त आंतरिक अशुद्धियों को दूर कर जीवन को पावन बना सकूँ, यही भावना बनी रहती हैं।

गुरुदेव! मैंने एक साल के लिए गृहस्थों से आपत्ति काल को छोड़कर फोन पर बात करने के त्याग का नियम किया है। एक साल के बाद आगे भी नियम बढ़ाने की भावना है। इसके लिए आपका आशीर्वाद चाहती हूँ।

मुझे चातुर्मास की शुरुआत में डेढ़ महीने तक अंतराय की असाता रही लेकिन उसके बाद आहार लगभग निरंतराय हो रहा है एवं स्वास्थ्य में भी अनुकूलता है। आपका आशीर्वाद ही मुझे शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक स्वस्थता प्रदान करता है।

गुरुदेव! मैं अनुभवहीन नादान साधिका हूँ, अतः पत्र लिखने में किसी प्रकार की भी गलती एवं अविनय हुआ हो तो क्षमा चाहती हूँ। आप तो किसी के प्रति अक्षमा भाव नहीं रखते, लेकिन क्षमा माँगना हमारा कर्त्तव्य है। यह पत्र मेरे भावों की अभिव्यक्ति है जो सिर्फ आपके लिए हैं।

पुनश्च आपके श्री चरणों में कोटि-कोटि नमन नमोऽस्तु। संघस्थ द्वय साधु वृंद एवं माताजी को नमोऽस्तु, वंदामि। सभी क्षुल्लिका माताजी, ब्र. सोहन जी एवं नितिन भैया को आशीर्वाद।

आपका आशीर्वाद सदैव मेरे सिर पर बना रहे, इसी भावना के साथ।

नमोऽस्तु-नमोऽस्तु-नमोऽस्तु।

आपकी शिष्या
आर्यिका सुनिधिमती
औरंगाबाद, दिनांक 02.11.2016

धर्म पर आने वाले संकट को दूर करने हेतु आचार्य कनकनन्दी गुरु के 1978 से प्रयास

(अनेकांतात्मक-वस्तुस्वरूपात्मक-आध्यात्मिकमय-जैन धर्म-जिनागम व उपरोक्त त्रय विशेषण युक्त समताधारी श्रमण/(साधु) के संकट निवारण हेतु दीर्घकाल (1978) से प्रयासरत वैज्ञानिक श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव।)

-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : सुनो-सुनो ऐ दुनिया वालों....., तुम दिल की....., सायोनारा.....)

सुनो-सुनो हे ! आर्षमार्गी/(आगमपंथी/बीसपंथी) कनक गुरु की आगम क्रांति...
एकांतवाद निरसन हेतु...प्रतिशोध बिन परिशोधन वृत्ति/(क्रांति)...(स्थायी)...

धर्मनाशे क्रियाध्वंसे...सुसिद्धांतार्थ विप्लवे...
अपृष्टैरपि वक्तव्यं...तत्स्वरूप प्रकाशने...

कनक गुरु ने इस उक्ति को...धर्म रक्षार्थे चरितार्थ किया...
क्षुल्लक अवस्था में शाहगढ़ (म.प्र. 1978) से...अनेकांत का शंखनाद किया...(1)...

श्रमणबेलगोल (1981 मुनि अव.) में आपको...प्रोत्साहक प्रेरक गुरुवृंद मिले...
विमल-भरत-सन्मतिसागर...कुंथुसागर-विजयमती माते...

शमणेवाड़ी (1985) से देशभूषण...कुंथु गुरु की अध्यक्षता में...
आपके नेतृत्व में सम्मेलन हुआ...कुञ्जवन धर्म परिषद् में...(2)...

आर्षमार्ग स्थापन आगम मण्डन...एकांतवाद के खण्डन हेतु...
प्रायः अर्द्धशत श्रमण जुटे...लाखों जन गण द्वय प्रांत से आए...

कर्नाटक महाराष्ट्र से ससंघ...मध्य भारत नागपुर में आए (1987-88)...
हर क्रांति अविरल गति से...कुशल नेतृत्व से आप बढ़ाये...(3)...

एकांतवादियों को उनके मंदिर में...उनके साहित्य से आह्वान किये...
उनकी पुस्तक धन्य अवतार व...छहढाला (आदि) से प्रतिप्रश्न किये...

शास्त्रार्थ में सुतर्कों से...हाईकोर्ट में परास्त किये...
अनेकांत की विजय हुई...देश के जन-गण-मन हर्षाये...(4)...

सोनागिरी (1988-89) में विमल भरत...कुंथु गुरु की प्रेरणा से...
वृहत् द्रव्य संग्रह-समयसार का...स्वाध्याय चार संघों (प्रायः 70 साधु) को कराये...

अनेक ब्रह्मचारिणियाँ बहिनें...विद्यासागर-ज्ञानानंद गुरु की...
आगम रहस्यों के द्वारा...समन्वय का बोध कराये...(5)...

बड़ौत में विमल गुरु आज्ञा से...जिनार्चना (ग्रंथ) द्वय सृजन किये...
प्राचीन ग्रंथों के आधार से...आगम सम्मत प्ररूपण किये...

आगम बाह्य क्रियाओं के निरसन...आर्षमार्ग सुरक्षा हेतु...
हस्तिनापुर (1989) में ससंघ पहुँचे...ज्ञानमती आर्या के अनुरोध से...(6)...

विरागसागर-सुधर्मसागर...प्रायः अर्द्धशत साधु-साध्वी मध्ये...
भारत के प्रायः ढाई सौ पण्डित...स्व-संघ-पर संघ मध्ये...

स्वाध्याय कराया समयसार का...युक्तियुक्त तत्त्व चर्चा से...
आगम को सबने स्वीकारा...अत्यंत विनम्र भाव से...(7)...

राजस्थान के निवाई ग्राम (1992) में...मोक्षशास्त्र की समीक्षा हुई...
आगम विरुद्ध लेखन निरूपण...विद्यासागर जी ससंघ के शोधन हेतु...

''मिथ्यात्व को आस्रव बंध क्षेत्र में...अकिञ्चित्कर मानना मिथ्या है...''
समाचार विधि के दूषण निरसन...हेतु बनी ''श्रमण संघ संहिता'' है...(8)...

सागवाड़ा (2006) के द्वितीय चातुर्मास में...भरत गुरु की समाधि हुई (आणिन्दा में)...
सुधासागर जी ने समाधि की निन्दा की...उसके निरसन शोधन हेतु...

''वर्तमान की आवश्यकता धार्मिक...उदारता न कि कट्टरता'' बनी...
ग्रंथ व पम्पलेट से निषेध करके...सागवाड़ा (मेवाड़-वागड़) समाज ने क्रांति की...(9)...

धर्म-दर्शन-विज्ञान विधा में...लाखों विद्यार्थी शिक्षित किये...
धर्म पर आने वाले संकट...यथायोग्य निरसन किये...

संकट आने पर कनकनन्दी...गुरु से सभी अपेक्षा करे...
किन्तु समय आने पर वे जन...सहयोग समर्थन नहीं करे...(10)...

जैन साधु की समाधि को कोर्ट ने...आत्महत्या कहकर विरोध किया...
उसके निरसन हेतु उच्च से...उच्चतम न्यायालय भेजा...

''अमृत तत्त्व की उपलब्धि हेतु...समाधिमरण'' सृजन किया...
प्रायः चालीस वर्षों से...अनेक क्रांतिकारी काम किया...(11)...

स्वार्थीजन कर्त्तव्यनिष्ठ नहीं...अकर्मण्य-निष्क्रिय जन हैं...
इण्डियन इडियट जन हैं...आग लगने पर कुआँ खोदे है...

अतः उठो! व जागृत होओ...आगम-धर्म सुरक्षा हेतु...
'कनक' गुरु का आह्वान सुनो...अनुभव ज्ञान से लाभान्वित हो...(12)...

मुक्ति रेल के इंजिन गुरु हैं...साधु-श्रावक इसके डिब्बे हैं...
डिब्बों को इंजिन से जुड़ना होगा...तभी धर्म संघ की रक्षा होगी...

गुरु के नेतृत्व मार्गदर्शन से...अन्य जन गण लाभ लेवे...
समताधारी निस्पृह कनक...अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा परे...(13)...

निराडम्बर प्रतिज्ञाबद्ध गुरु...सम्मेदशिखर में (1988) नियम लिए...
धन-जन व चंदा-चिट्ठा हेतु...वर्चस्व व हस्तक्षेप न करते...

आओ कोई भी धर्म के पंथी...पक्षपात भेदभाव नहीं है...
सर्वे भवन्तु सुखिनः जीव...'सुविज्ञ' श्रमण की भावना है...(14)...

सीपुर, दिनांक 07.11.2016, मध्याह्न 2.55

अनंत आत्म वैभव बिना गर्व आदि क्यों करूँ?

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : आत्मशक्ति.....)
मैं अनंत आत्मिक वैभवधारी,
कर्मचोर ने की मेरी वैभवचोरी।

जिससे मैं अभी भोग रहा हूँ कंगाली,
कंगाल होकर कैसे बनूँ अहंकारी (घमण्डी)।। (1)

मैं हूँ अनंत आत्मिक गुणगणधारी,
राग द्वेष मोह शत्रु ने बनाया अवगुणधारी।

कर्मचोर व शत्रुओं को मैं विनाश करके,

बनना मुझे प्रभु-विभु-गुणधारी।। (2)

मैं हूँ अनंत ज्ञानदर्शन का स्वामी,
ज्ञानदर्शन आवरण से बना अल्पज्ञानी।

अनंत ज्ञानदर्शन प्राप्त करना है बाकी,
अल्पज्ञ होकर कैसे बनूँ ज्ञानअभिमानी।। (3)

अनंत सुखवीर्य का भी मैं हूँ स्वामी,
घातीकर्म रूपी घातक से बना निर्धनी।

सांसारिक सुख शक्ति से क्यों करूँ अभिमान,
घाती को घातकर बनूँ सुखवीर्यवान्।। (4)

आत्म-उपलब्धि से ही मेरी प्रसिद्धि/(सिद्धि),
परिनिर्वाण से ही है मेरा निमीण/(पूर्णता)।

स्व-आत्मिक वैभव आदि पाना है लाभ,
उक्त पुरुषार्थ हेतु शोध-बोध-खोज।। (5)

इस हेतु ही मेरी सभी साधना मात्र,
तप-त्याग व ध्यान-अध्ययन शास्त्र।

निस्पृह-निराडम्बर-एकांतवास व मौन,
प्रभावना-प्रवचन-लेखन-अध्यापन।। (6)

शुद्ध-बुद्ध-आनंद है मेरा स्वधर्म,
सत्य-समता-शुचि से पाऊँ सुधर्म।

संकीर्ण-कट्टर व वर्चस्व-स्वार्थ शून्य,
सच्चिदानंद बनना है 'कनक' (का) लक्ष्य।। (7)

सीपुर, दिनांक 09.12.2016, रात्रि 10.26 व 6.50 प्रातः

अज्ञानी स्वयं को शिष्ट/शांत/संत बनाये बिना भगवान् को संतुष्ट करने में अपना कल्याण मानता है।

-आचार्य कनकनन्दी